ज्ञानपीठ-लोकोदय ग्रन्थमाला-हिन्दी ग्रन्थाङ्क-५

मिलन यामिनी

बच्चन

भा र ती य ज्ञा न पी ठ का शी

ग्रन्थमाला सम्पादक
श्री लक्ष्मीचन्द्र जैन एम० ए०

प्रकाशक
अयोध्याप्रसाद गोयलीय
मत्री, भारतीय ज्ञानपीठ
दुर्गाकुण्ड रोड, बनारस

मिलन यामिनी

पहला सस्करण ५०००
जुलाई १९५०
मूल्य चार रुपये

मुद्रक
कृष्ण प्रसाद दर
इलाहाबाद लॉ जर्नल प्रेस
इलाहाबाद

मिलन यामिनी की

प्रथम पंक्ति सूची

क्रम सख्या		पृष्ठ सख्या
पूर्व भाग		
१—चाँदनी फैली गगन मे, चाह मन मे		१९
२—प्यार की असमर्थता कितनी करुण है	..	२०
३—मै कहाँ पर, रागिनी मेरी कहाँ पर	..	२१
४—प्राण, मेरा गीत दीपक-सा जला है	..	२२
५—आज आँखो मे प्रतीक्षा फिर भरो तो	..	२३
६—आज फिर से तुम बुझा दीपक जलाओ	..	२४
७—आज मन-वीणा, प्रिये, फिर से कसो तो	..	२५
८—स्नेह दो तो आज लौ फिर सिर उठाए	.	२६
९—आज तुम गत को भविष्यत मे बदल दो	..	२७
१०—आज तुम उच्छ्वास को उल्लास कर दो		२८
११—प्राण, जीवन का नया अध्याय खोलो		२९
१२—बाँध दो बिखरे सुरो को गान मे तुम	..	३०
१३—आज मन भावन करो पावन वचन-मन	..	३२
१४—प्राण की यह बीन बजना चाहती है	..	३२
१५—आज आओ चाँदनी मे स्नान कर लो	.	३३
१६—आज कितनी वासनामय यामिनी है	.	३४

क्रम सख्या — पृष्ठ सख्या

१७—हास मे तेरे नहाई यह जुन्हाई ३५
१८—है रुपहली रात, हैं सपने सुनहले ३६
१९—आज, संगिनि, प्रीति के तुम गीत गाओ ३७
२०—आज आ गाएँ, जगाएँ रात सोती ३८
२१—प्राण, केवल प्यार तुमको दे सकूँगा ३९
२२—स्वप्न मे तुम हो, तुम्ही हो जागरण मे ४०
२३—प्राण, कह दो आज तुम मेरे लिए हो ४१
२४—प्रात-मुकुलित फूल-सा है प्यार मेरा ४२
२५—प्यार के पल मे जलन भी तो मधुर है ४३
२६—इस पुरातन प्रीति को नूतन कहो मत ४४
२७—आज रिमझिम मेघ, रिमझिम है नयन भी ४५
२८—मै प्रतिध्वनि सुन चुका, ध्वनि खोजता हूँ ४६
२९—प्यार की तो भूल भी अनुकूल मेरे ४७
३०—जानता हूँ प्यार, उसकी पीर को भी ४८
३१—शूल तो जैसे विरह वैसे मिलन मे ४९
३२—प्यार से, प्रिय, जी नही भरता किसीका ५०
३३—गीत मेरे देहरी के दीप-सा बन ५१

मध्य भाग

१—मै गाता हूँ इसलिए कि पूरब से सुरभित ५५
२—मै रखता हूँ हर पाँव सुदृढ विश्वास लिए ६०
३—प्यार, जवानी, जीवन इनका ६६
४—बहती है मधुवन मे अब पतझर की बयार ७०
५—पतझर से डरे जिसके उर मे ७३

क्रम सख्या	पृष्ठ संख्या
६—वह कूकी लाई साँस नई मधुवन मे	७७
७—सहसा बिरवो मे पात लगे	८०
८—डाले पलाश की फूट पडी	८४
९—अनगिनत बसती फूलो के गुच्छो मे	८८
१०—इन चिकने, ताजे, हरे, नए	९३
११—गरमी मे प्रात काल पवन	९८
१२—ओ पावस के पहले बादल	१०३
१३—चाँदनी रात के आँगन मे	१०८
१४—तुम आओगी जिस दिन होगी	११३
१५—वह एक दिवस को आई थी	११७
१६—मन रोक न जो मुझको रखता	१२२
१७—खीचती तुम कौन ऐसे बधनो से	१२६
१८—तुमको मेरे प्रिय प्राण निमत्रण देते	१३१
१९—प्राण, सध्या झुक गई गिरि, ग्राम, तरु पर	१३४
२०—क्या मेरा है जो आज तुम्हे दे डालूँ	१३९
२१—मौन यामिनी मुखरित मेरी	१४२
२२—मधु पी लो, मौसम आज बड़ा प्यारा है	१४६
२३—सखि अखिल प्रकृति की प्यास कि हम-तुम भीगे	१४९
२४—बद्ध तुम्हारे भुजपाशो मे	१५२
२५—सखि, यह रागो की रात नही सोने की	१५६
२६—प्रिय, शेष बहुत है रात अभी मत जाओ	१५९
२७—चाँद चमकता वायु ठुमकती	१६२
२८—कहाँ, विमोहिनि, ले जाओगी	१६६
२९—अस्त हुआ दिन, मस्त समीरण	१७०

क्रम सख्या	पृष्ठ सख्या
३०—सुधि मे सचित वह साँझ कि जब	१७४
३१—तन त्रस्त कही, मन मस्त वही	१७६
३२—मै गाता हूँ इसलिए जवानी मेरी है	१८४
३३—जीवन की आपाधापी मे	१८६

उत्तर भाग

१—कुदिन लगा, सरोजिनी सजा न सर	१९७
२—सुवर्ण मेघ युक्त पच्छिमी गगन	१९८
३—निशा, मगर बिना निशा सिंगार के	१९९
४—दिवस गया विवश थका हुआ शिथिल	२००
५—शिशिर समीर वन झकोर कर गया	२०१
६—प्रहार शीत वात का हुआ निठुर	२०२
७—अपत्र डाल-डाल है खडी हुई	२०३
८—दिनानुदिन जली धरा, जला गगन	२०४
९—वसत दूत कुज-कुज कूकता	२०५
१०—विदग्ध भूमि व्योम को निहारती	२०६
११—अनेक रग से रँगा हुआ गगन	२०७
१२—समेट ली किरण कठिन दिनेश ने	२०८
१३—दिवस नयन मुँदे जगी विभावरी	२०९
१४—सिंदूर सी किरण सुवर्ण थाल मे	२१०
१५—समीर स्नेह रागिनी सुना गया	२११
१६—सिगार हार की सुगध आ रही	२१२
१७—हुई गुलाल मेघमाल अस्त जब	२१३
१८—किरण छिपी तड़ाग अतराल मे	२१४

क्रम सख्या	पष्ठ सख्या
१९—अधीर है समीर अतरिक्ष मे	२१५
२०—सहस्त्र नेत्र खोलकर खडा गगन	२१६
२१—नखत समूह आसमान पर चढा	२१७
२२—तरणि छिपा कि आँधियाँ झपट पडी	२१८
२३—नवीन राग में रमे नवीन घन	२१९
२४—पुकारता पपीहरा पि ..आ, पि आ	२२०
२५—विहग माल डाल पर उतर पडी	२२१
२६—बिखर हुई विलुप्त अभ्र अर्गला	२२२
२७—पहन चुका गगन नखत-खचित-वसन	२२३
२८—वसत का पवन कि श्वास प्यार का	२२४
२९—पलाश पर दुलार, लो, उतर पडा	२२५
३०—कि वह कभी न स्वर्ग मे समा सका	२२६
३१—सुना कि एक स्वर्ग शोधता रहा	२२४
३२—कही अनादि का पता लगा रहा	२२८
३३—उसे न विश्व की विभूतियाँ दिखी	२२९

मिलन यामिनी

तेजी को

जिसके तन की विमल कल्पना
'अजित' 'अमित' की बन किलकार
पुलक उठी मेरे आँगन मे।

जिसके मन की विकल भावना
मथ मेरे मन का ससार
मुखर हुई मेरे गायन मे।

जिसकी वाणी की वर वीणा
अमर क्षणो की बन झनकार
गूँज रही मेरे जीवन मे।

बच्चन

मिलन यामिनी

विचार-तारको की परछाई मे

बच्चन की रचनाओ मे 'मिलन यामिनी' प्रकाशन से पूर्व ही पर्याप्त ख्याति प्राप्त कर चुकी है । पुस्तक के प्रकाशन मे जितनी ही अधिक देर हुई है, पाठकों की प्रतीक्षा उतनी ही अधिक अधीर होती गई है । प्रेमियो के तकाजे, अनुरोधो और चुटकियो से जब कवि का नाको दम आ गया है तब कही पाठको को प्राप्त हो पाई है 'मिलन यमिनी' । इस बारे मे कवि ने 'आमुख' मे जो कैफियत दी है, उसे चुपचाप स्वीकार कर लेना ही ठीक है । अधिक तर्क-वितर्क कीजियेगा या उलझियेगा, तो 'मिलन यामिनी' के रस-सिक्त दुर्लभ क्षणो को खो बैठियेगा और गालिब की फेहरिस्त मे, बज्म से परीशॉ-हाल निकलनेवालो मे नाम लिखवा लीजियेगा —

> "बूयेगुल, नालये-दिल, ¹दूदे-चिरागे-महफिल
> जो तेरी बज्म से निकला मो परीशॉ निकला"

जब बच्चन से मैंने ज्ञानपीठ के लिए 'मिलन यामिनी' का प्रकाशनाधिकार दे देने का अनुरोध किया, तो उन्होने अप्रत्याशित ही प्रश्न किया—ज्ञानपीठ के भारी भरकम नाम के साथ 'मिलन यामिनी' की तुक कैसे बिठायेगे ? मैंने कहा—ज्ञानपीठ उस सब साहित्य का आदर करता है जो जीवन को प्रेरणा अथवा प्रतिबिम्ब दे' । 'मिलन यामिनी' मे जीवन की एक प्रबल और उद्दाम प्रेरणा का कलापूर्ण चित्रण तो है ही, इसमे हमे एक कलाकार के अन्तस्तल की और विकसित व्यक्तित्व की निकटतम झॉकी मिलनी है ।

---

¹धुआँ

'मिलन यामिनी' का बच्चन की रचनाओ मे क्या स्थान है ? इस प्रश्न का उत्तर कठिन है। एक तो इसलिए कि पाठको की रुचि और रसबोध की क्षमता तथा आलोचको के निजी दृष्टिकोण और साहित्यिक मान्यताओ मे विभिन्नता है, दूसरे इसलिए कि बच्चन की काव्यसाधना नैसर्गिक झरने की तरह नित्य नये क्षेत्रो, नई घाटियो और वादियो को पार करती बढी जा रही है—लगता है जैसे वह कभी किसी समतल स्थानपर जाकर नदी की धारा का रूप लेगी ही नही। 'मधुशाला', 'एकान्त-सगीत', 'बगाल का काल', 'हलाहल', और 'खादी के फूल' की भावनाएँ, शैली, और तत्कालीन प्रेरणाएँ एक दूसरे से बहुत कुछ भिन्न है। इनमे एकसूत्रता यदि है तो यही कि सब बच्चन की रचनाएँ है। इसका अर्थ यह हुआ कि जिस रचना मे हम बच्चन को अधिक से अधिक पाएँ वही उनकी प्रतिनिधि और स्थायी रचना माने। इस दृष्टि से 'मिलन यामिनी' बहुत महत्वपूर्ण है क्योकि इसके १०० गीतो से हमे उन प्रेरणाओ का बोध होता है जिन्होने कवि के हृदय को मथकर उसकी भावनाओ को मुखरित और व्यक्तित्व को विकसित किया है।

प्रेम जीवन की प्रबलतम प्रेरणा है। इसके अनेक नाम है, अनेक रूप है और अनेक प्रकार से इसका आदान-प्रदान होता है। इसलिए इसकी अभिव्यक्ति भी अनेक देशों मे, अनेक भाषाओ मे विविध प्रकार से हुई है। किन्तु, प्रेम की अनुभूति और अभिव्यक्ति मे कुछ ऐसे अमर और सर्वव्यापक तत्व है जो देश, काल, जाति और व्यक्ति की सीमाओ का अतिक्रमण करके सामान्य जन-जीवन और जग-जीवन को अनुप्राणित करते है। 'मिलन यामिनी', के पीछे एक ऐसे कवि का हृदय है जिसने जीवन के विभिन्न पहलुओ को निर्द्वन्द्व होकर अत्यन्त निकट से देखा है, जिसने ससार की प्रतिक्रियाओ से सघर्ष किया है, जो प्राप्य के लिये तपा है और खपा है तथा जिसकी अनुभूति ने सागर की गहराइयाँ और शिखरो की ऊँचाइयाँ नापी है। अभिशाप को भी बरदान की तरह झेलता, निशाओ को निमत्रण देता, एकान्त सगीत मे अन्तर की आकुलता को उँडेलता हुआ कवि एक दिन उस मजिल पर पहुँचा जहाँ सतरगिनी की आभा और आकर्षण उसके प्राणो पर

छा गए । 'मिलन यामिनी' उसी जीवन-यात्रा और जीवन-साधना की एक परितृप्ति पूर्ण मंजिल है —

"मैं जलन का भाग अपना भोग आया,
तब मिलन का यह मधुर संयोग आया।"

और, 'मिलन यामिनी' के भरमाये-भरमाये चाँद-तारे, उच्छ्वसित फूल, ठुमकती वायु और गीत-दीप जिस रूपसी के एक दृष्टि-निक्षेप, एक पद-चाप और एक मुस्कराहट से शतशत बार पुलकित हो उठते है, कवि की उस प्रेयसी-प्रेरणा की झलक क्या कम महत्व की है ? कवि की स्वीकारोक्ति है —

"बनकर आग नही पैठा जो, कब उसको स्वीकार किया है,
बनकर राग नही निकला जो, कब उसका इजहार किया है,
स्थान दिया कब उसको मैने, मथ न दिया जिसने मन मेरा।"

इस अनाहूत, दुर्द्धर्ष, अद्भुत और अपरिहार्य प्रेम के प्रति कवि के आत्मसमर्पण का चित्र कितना सजीव है —

"खीचती तुम कौन ऐसे बधनो से
जोकि रुक सकता नही मै,
खीचती किन पीर-भीगे गायनो से
जोकि रुक सकता नही मै,
है समय किसको कि सोचे बात वादो की, प्रणो की,
मान के, अपमान के, अभिमान के बीते क्षणो की;
फूल यश के, शूल अपयश के बिछा दो रास्ते मे,
घाव का भय, चाह किसको पखुरी के चुबनो की।
मै बुझाता हूँ पगो से आज अन्तर के अँगारे
और वे सपने कि जिनको कवि-करो ने थे सँवारे,
आज उनकी लाश पर मै पाँव धरता आ रहा हूँ,

खीचती किन मौन दृग के जल कणो से
जो कि रुक सकता नही मै ।"

कवि का यह उद्दाम और अप्रतिहत प्रेम जिस मिलनोत्सुक यामिनी मे, प्रेयसी के हृदय की धडकन मे प्रतिध्वनित होकर आत्म-निवेदन करेगा, उस 'मिलन यामिनी' का वातावरण कितना मोहक होगा ! ! 'मिलन यामिनी' मे वसन्त और वर्षा तथा सन्ध्या और चान्दनी के गीत अनेक लडियो मे गूँथे गए है। प्रकृति का कोई चित्रण ऐसा नही, वातावरण का कोई स्पन्दन ऐसा नही जो कवि की भावनाओ और अनुभूति के सहज सामजस्य के कारण एकाकार और तद्रूप न हो गया हो। कुछ नमूने देखिए --

वसन्त --"कुछ अनजाने सुख से सिहरी सब सूखी सूखी शाखाये,
उनपर ऐसी लाली दौडी, जैसे गालो पर शरमाये
उस बाला के जिसका कोई मुखचुबन पहली बार करे !
यह देख समा मेरी सहमी आँखो मे आँसू भर आये।
क्या था उस मादक लाली मे, क्या उस मोहक हरियाली मे,
जिससे छाती मे तीर चुभे, जिससे अन्तर मे चाह जगी !

इसी का दूसरा रूप निहारिये --

"अनगिनत वसन्ती फूलो के गुच्छो मे, गिनती के--
पत्तो का अमलतास फिर एक बार
कर जाता है मुझको उदास !

× × ×

मेरी अभिलाषाये बिखरी कुसुमो की सुन्दरता बनकर,
मेरे चिन्तन के क्षण कितने निखरे छाया मे छन-छनकर,
डाले भुज है जिनको मेरी आशाओ ने फैलाये है,
विश्वास अटल मेरा बैठा इसकी जड की दृढता बनकर।

यह वृक्ष नही जिसपर पतझर, मधुऋतु का शासन चलता है;
प्रत्याशाओ के झूलो मे झूला-भूला स्वप्निल तत्त्वो—
का अमलतास फिर एक बार
कर जाता है मुझको उदास।"

वर्षा —

"झर-झर लो वृष्टि लगी होने, अम्बर के दृग के कोने से,
मन क्यो यो गल-ढल जाता है, अभिलाषा पूरी होने से,
अन्तर मे उमडे भावों का इतना ही तो इतिहास नही,
मोती की फसले उगती है, आँसू की बूदें बोने से।"

सन्ध्या.—"प्राण, सन्ध्या झुक गई गिरि, ग्राम तरुपर
उठ रहा है क्षितिज के ऊपर सिदूरी चाँद
मेरा प्यार पहली बार लो तुम"

चान्दनी —"चान्दनी रात के आँगन मे
कुछ छिटके-छिटके से बादल
कुछ भटका-भटका-सा मन भी!
जब सारी दुनिया सोयी है, तब नभ मडलपर चाँद जगा,
कुछ सपनो मे डूबा-डूबा, कुछ सपनो मे उमगा-उमगा,
उसके पथ मे अनचाहे से कुछ बेबस बादल के टुकडे;
जैसे ये बादल के टुकडे सुखमा का आँचल थामे से,
अनजान किसी पर न्योछावर
क्या शोभन, स्वगतमय होगा
मेरे उर का पागलपन भी ?"

'मिलन यामिनी' का प्रणय व्यापार कवि की दृष्टि मे प्रकृति की एक स्वाभाविक माँग है, जिसकी पूर्ति के लिए कविता के पात्र साधन मात्र है .—

"सखि अखिल प्रकृति की प्यास, कि हम-तुम भीगे;

अकस्मात यह बात हुई क्यो जब हम-तुम मिल पाये,
तभी उठी आँधी अम्बर मे, सजल जलद घिर आये,
यह रिम-झिम सकेत गगन का, समझो या मत समझो,
सखि, भीग रहा आकाश कि हम-तुम भीगे ।"

× × ×

"हम किसी के हाथ मे साधन बने है,
सृष्टि की कुछ माँग पूरी हो रही है,
हम नही अपराध कोई कर रहे है,
मत लजाओ, और देखो उस तरफ भी—
प्राण, रजनी भिच गई नभ के भुजो मे
थम गया है शीश पर निरुपम रुपहरा चाँद,
मेरा प्यार बारम्बार लो तुम"

और उसके बाद

"किन्तु तृण-तृण ओस छन-छन कह रही है
आ गई वेला विदा के आँसुओ की,
यह विचित्र विडम्बना पर कौन चारा,
हो न कातर, और देखो उस तरफ भी—
प्राण, राका उड गई प्रात पवन मे,
ढल रहा है क्षितिज के नीचे शिथिलतन चाँद
मेरा प्यार अन्तिम बार लो तुम" ।

नि सन्देह 'मिलन यामिनी' की इस प्रकार की कवितायें पढकर एक विशेष प्रकार के आदर्शवादी पाठको के मन मे प्रतिक्रिया होगी कि कलाकार रसातिरेक मे बह गया, उसका वर्णन आवश्यकता से अधिक अनावृत हो गया, श्लील की डोर शिथिल हो गई . . और ये, कि कुछ चीजे है जो कही नही जाया करती, छिपाई जाया करती है, आदि आदि । इस आलोचना के उत्तर मे हम कुछ न

कहेगे; पाठकोका ध्यान कवि की इन पक्तियो की ओर आकर्षित करेगे :—

"मै गाता हूँ,
मै गाता हूँ, इसलिए जवानी मेरी है। ..
कलियाँ मधुबन मे गध-गमक मुस्काती है,
मुझपर जैसे जादू सा छाया जाता है,
मैं तो केवल इतना ही सिखला सकता हूँ,
अपने मनको किस भाँति लुटाया जाता है।
लिखने दो अपनी दुर्बलता का गीत मुझे,
मै जग के तर्ज-अमल से हूँ अनभिज्ञ नही,
दुनिया अक्सर मेरे कानो मे कहती है,
इस कमजोरी को, मूढ, छिपाया जाता है।
मै किससे भेद छिपाऊँ सब तो अपने है,
अपनी बीती मे जग-बीती मै पाता हूँ।

मानवता के प्रति बच्चन की जो अटूट श्रद्धा है और उसकी वेदी पर कवि ने उपासना के जो फूल चढाये हैं उनके दर्शनो से ही हम मानो पवित्र हो जाते हैं और हमारी आलोचना कुठित हो जाती है —

"मनुष्य हर स्वरूप मे पवित्र है"
"विरागमग्न हो कि राग-रत रहे,
विलीन-कल्पना, कि सत्य मे दहे,
धुरीण पुण्य का कि पाप मे बहे,
मुझे मनुष्य सब जगह महान है।"

'मिलन यामिनी' की कुछ कवितायें कितनी ही पार्थिव, अनावृत और इन्द्रियार्थिणी लगे, वास्तव मे इनके मूल मे कवि का वह व्यापक और दार्शनिक दृष्टिकोण निहित है और इनके अन्तर मे वेदना और व्यथा का वह स्रोत घुमड रहा है जो पार्थिव को अपार्थिव और इन्द्रियार्थी को आत्मार्थी (व्यापक अर्थ मे) बना देता

है। स्नेह के अपरिमित उल्लास मे और समर्पण की उद्भ्रान्त घडियों मे भी कवि की दृष्टि अपार्थिव की प्राप्ति की ओर ही है —

"मै प्रतिध्वनि सुन चुका, ध्वनि खोजता हूँ।
तुम समर्पण बन भुजाओ मे पडी हो,
उम्र इन उद्भ्रान्त घडियो की बडी हो,
मधु मिला है, मै अमृत-कण खोजता हूँ।
जी उठा मै, और जीना प्रिय बडा है,
सामने पर ढेर मुर्दो का पडा है,
पा गया जीवन सजीवन खोजता हूँ,
मै प्रतिध्वनि सुन चुका, ध्वनि खोजता हूँ।

× × ×

"मै रखता हूँ हर पॉव सुदृढ विश्वास लिए
ऊबड-खाबड तम की ठोकर खाते खाते
उससे कोई रक्ताभ किरण फूटेगी ही।
है मेरा पूरा सफर नपा, मेरी छाती की धडकनसे
मै लेता हूँ हर सॉस अमर विश्वास लिए
मै पहुँच न पाऊँ जीते जी अपनी मजिल,
पर, मरने पर मजिल मुझतक पहुँचेगी ही।
मै गाता हूँ हर गीत मधुर विश्वास लिए
लहराती अम्बर पर, तारो से टकराती
ध्वनि पास तुम्हारे एक समय गूँजेगी ही"।

'आमुख' मे बच्चन ने जिस "उत्तरोतर भावनाओ" के 'शिखर' का उल्लेख किया है, पाठक उस शिखर पर मिलन यामिनी के उत्तर भाग की कविताओ के माध्यम से पहुँचता है। उत्तर भाग के प्राय. सभी गीत शीर्षको की नूतनता, छन्द के प्रवाह, अभिव्यक्ति की सुघराई और परिमार्जित शैली के आकर्षण के कारण अनूठे बन पडे है। इनमे अनेक गीत भावनाओ के स्वाभाविक उत्थान,

उत्कर्ष और अवसान के कारण अपने आपमे इतने सम्पूर्ण है कि इनमे 'लिरिक' (Lyric) की मिठास, सोनेट (Sonnet) का अभिव्यक्ति-कौशल और 'रुबाई' का दार्शनिक चमत्कार मिलता है। उत्तर भाग की आरभिक कवितायें प्रणय की प्रतीक्षा और व्यथा को मिलन के आशा भरे क्षणो मे प्रभात, सन्ध्या और रात्रि के अथवा शिशिर और वसत के प्रतीको द्वारा प्रस्फुटित करते है। ऐसी प्रत्येक कविता का अन्त जीवन और ज्योति से भरे छन्द-चरणो मे हुआ है।

इस भाग मे तीन-तीन छन्दो की अनेक ऐसी सरस और सजीव रचनाये है जिनके एक-एक छन्द मे वारी-बारी से प्रकृति और प्रणय के उन्मेष, प्रस्फुटन और सफल अवसान का एक-एक चित्र सामञ्जस्य की सम्पूर्णता मे निर्दोष और मोहक बन पडा है। उदाहरणार्थ —

"समीर स्नेह रागिनी सुना गया, तडाग मे उफान सा उठा गया,
तरग मे तरग लीन हो गई, झुकी निशा, झँपी दिशा, झुके नयन !
बयार सो गई अडोल डाल पर,
शिथिल हुआ सलिल सुनील ताल पर,
प्रकृति सुरम्य स्वप्न बीच खो गई,
गई कसक, गिरी पलक, मुदे नयन !
विहग प्रीत-गीत गा उठा अभय, उडा अलक चला ललक पवन मलय,
सुहाग नेत्र चूमने चला प्रणय, खुला गगन, खिले सुमन, खुले नयन !"

इसी दृष्टि से इस भाग की बारहवी कविता 'समेट ली किरण कठिन दिनेश ने' के प्रत्येक छन्द की अन्तिम पक्ति देखिए —

"नटी निशीथ का पुलक उठा हिया",
"निशा सभीत ने कहा कि, 'क्या किया',"
"निशा विनीत ने कहा कि 'शुक्रिया',"

१७ वी कविता—'हुई गुलाल मेघमाल अस्त जब" एक अद्भुत रचना है जो व्यञ्जना मे सार्थक और प्रतीक मे परिपूर्ण है। यहाँ आभूषणो की झकार

से ही प्रकृति और प्रणय का त्रिक्रियात्मक व्यापार—उन्मेष, उत्कर्ष और परितृप्त अवसान दिखाया गया है। प्रत्येक छन्द की अन्तिम पंक्ति है—

"मुखर चरण ध्वनित हुए झनन-झनन"
"सुवर्ण किंकिणी बजी छुनन-छुनन"
"खनक उठे कनक-वलय खनन-खनन"

यह बात नही कि 'मिलन यामिनी' मे खामियाँ नही है। कुछ कवितायें ऐसी है जो या तो शब्द-बहुल है या उनका पूरा प्रभाव ग्राह्य नही बन पाता। पूर्व भाग और उत्तर भाग की कई कविताओ मे कला और कल्पना का इतना अन्तर है कि यदि वे 'मिलन यामिनी' के कलेवर से निकाल दी जाये तो शायद पता भी न चले कि यह बच्चन की लिखी हुई हो सकती है। शायद यही कारण है कि 'मिलन यामिनी' के प्रति सबसे बडा अन्याय स्वय बच्चन ने किया है। 'आमुख' मे लिखा है "अपने लक्ष्य का ध्यान करता हूँ तो मुझे 'मिलन यामिनी' से उतना ही असन्तोष होता है, जितना अपनी प्रारम्भिक रचनाओ से।"

तो फिर, बच्चन का 'लक्ष्य' क्या है ? उसकी विवेचना मे जायेगे तो शायद ऐसी भूलभुलैयाँ मे फँस जायेगे कि स्वय बच्चन भी हमे न निकाल पायेगे। बच्चन ने कहा है —

"जो असम्भव है, उसीपर आँख मेरी,
चाहती होना अमर, मृत राख मेरी"

और यह भी कहा है —

"जग दे मुझपर फैसला उसे जैसा भाये,
लेकिन मै तो बेरोक सफर मे जीवन के
इस एक और पहलू से होकर निकल चला" .

—लक्ष्मीचन्द्र जैन
सम्पादक
लोकोदय ग्रन्थमाला

आमुख

'मिलन यामिनी' की कविताएँ सन् १९४५ से पत्र-पत्रिकाओ मे निकल रही थी। इन्हे अब सग्रह रूप मे उपस्थित कर रहा हूँ। कई कारणो से इसे प्रकाशित कराने मे आवश्यकता से अधिक विलब हो गया। इसे देखने के लिए उत्सुक मित्र प्राय यह भोडा प्रश्न भी पूछने से नही हिचके कि, 'आपकी मिलन यामिनी कब समाप्त होगी ?' उन्हे लबी प्रतीक्षा कराने के लिए क्षमा प्रार्थी हूँ। इसे देखकर शायद वे कह सकेगे—देर आयद दुरुस्त आयद।

'मिलन यामिनी' मे ९९ कविताएँ है। इन्हे मैने ३३-३३ के तीन भागो मे विभक्त कर दिया है। पहले और तीसरे भाग मे मैने एक खास तरह के साँचे मे ढली कविताएँ रक्खी है। दूसरे भाग मे कोई ऐसा प्रतिबध स्वीकार नही किया गया। आशा है कविताओ का प्रस्तुत विभाजन और क्रम आरभ से अत तक पढनेवालो को, कही-कही कुछ उतार-चढाव के बावजूद भी, उत्तरोत्तर भावनाओ के उस शिखर की ओर ले जायगा जो 'मिलन यामिनी' लिखते समय बराबर मेरी दृष्टि मे रहा है। यो अपने आप मे प्रत्येक कविता स्वतत्र भी है।

अपने प्रिय मित्र श्री महाराजकृष्ण रजन के निमत्रण पर मै यहा वायु-परिवर्तन के लिए आया था और विचार था यहाँ पूर्ण विश्राम करूँगा। परन्तु इस मनोरम स्थान मे जहाँ एक ओर तो हिमाच्छादित धवलीधार पर्वतमाला खडी है और दूसरी ओर अनेक पहाडी नालो और झरनो से निनादित और अभि-सिचित काँगडा की उर्वरा घाटी फैली है जिसकी दक्षिणी सीमा पर व्यास नदी दूर दूध की रेखा के समान दिखाई देती है, मै अपनी वाणी पर नियत्रण न रख

सका । यही 'मिलन यामिनी' पूर्ण हुई और यही मैंने उसके गीतो का क्रम आदि स्थापित किया एव प्रेस कापी भी तैयार की ।

श्री महाराजकृष्ण और उनके मित्रो ने मेरे यहाँ ठहरने और काम करने की जो सुव्यवस्थाएँ की और सुविधाएँ दी है उन सबके लिए मै उनका आभार मानता हूँ, और उन्हे विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि उनका स्नेह, सौहार्द और उनके रम्य प्रदेश की स्मृतियाँ सदा के लिए 'मिलन यामिनी' के साथ सबद्ध हो गई है ।

'मिलन यामिनी' के प्रति मेरे कतिपय प्रेमियो के उद्गार मुझे प्राय सकोच मे डालते रहे है । अपने लक्ष्य का ध्यान करता हूँ तो मुझे 'मिलन यामिनी' से उतना ही असतोष होता है जितना अपनी प्रारभिक रचनाओ से ।

माउट-प्लेजेट
धर्मशाला-कॉंगडा
६ ४ ४६

बच्चन

मिलन यामिनी

मिलन यामिनी

पूर्व भाग

१

चाँदनी फैली गगन मे, चाह मन मे ।

दिवस मे सबके लिए बस एक जग है,
रात मे हर एक की दुनिया अलग है,
कल्पना करने लगी अब राह मन मे;
चाँदनी फैली गगन मे, चाह मन में ।

भूमि का उर तप्त करता चद्र शीतल,
व्योम की छाती जुडाती रश्मि कोमल,
किंतु भरती भावनाएँ दाह मन मे;
चाँदनी फैली गगन मे, चाह मन मे ।

कुछ अँधेरा, कुछ उजाला, क्या समा है,
कुछ करो, इस चाँदनी मे सब क्षमा है,
किंतु बैठा मै सँजोए आह मन मे ;
चाँदनी फैली गगन मे, चाह मन मे ।

चाँद निखरा, चद्रिका निखरी हुई है,
भूमि से आकाश तक बिखरी हुई है,
काश मै भी यो बिखर सकता भुवन मे ;
चाँदनी फैली गगन मे, चाह मन मे ।

२

प्यार की असमर्थता कितनी करुण है।

चाँद कितनी दूर है, वह जानता है,
और अपनी हद्द भी पहचानता है,
हाथ इसपर भी उठाता ही वरुण है;
प्यार की असमर्थता कितनी करुण है।

सृष्टि के पहले दिवस से यत्न जारी,
दूर उतनी ही निशा की श्याम सारी,
किंतु पीछा ही किए जाता अरुण है,
प्यार की असमर्थता कितनी करुण है।

कट गए शत कल्प अपलक नेत्र खोले,
कौन आया? सुन इसे नक्षत्र बोले,
भावना तो सर्वदा रहती तरुण है,
प्यार की असमर्थता कितनी करुण है।

जो असंभव है उसीपर आँख मेरी,
चाहती होना अमर मृत राख मेरी,
प्यास की साँसें बची, बस यह शकुन है,
प्यार की असमर्थता कितनी करुण है।

३

मै कहॉ पर, रागिनी मेरी कहॉ पर।

है मुझे ससार बॉधे, काल बॉधे,
है मुझे जजीर औ' जजाल बॉधे,
किंतु मेरी कल्पना के मुक्त पर-स्वर ;
मै कहॉ पर, रागिनी मेरी कहॉ पर।

धूलि के कण शीश पर मेरे चढे है,
अक ही कुछ भाल के ऐसे गढे है,
किंतु मेरी भावना से बद्ध अबर ;
मै कहॉ पर, रागिनी मेरी कहॉ पर।

मै कुसुम को प्यार कर सकता नही हूँ,
मै कली पर हाथ धर सकता नही हूँ,
किंतु मेरी वासना तृण-तृण निछावर ;
मै कहॉ पर, रागिनी मेरी कहॉ पर।

मूक हूँ, जब साध है सागर उँडेलूँ,
मूर्ति-जड, जब मन लहर के साथ खेलूँ,
किंतु मेरी रागिनी निर्बंध निर्झर ;
मै कहॉ पर, रागिनी मेरी कहॉ पर।

४

प्राण, मेरा गीत दीपक-सा जला है।

पाँव के नीचे पडी जो धूलि बिखरी,
मूर्ति बनकर ज्योति की किस भाँति निखरी,
आँसुओ मे रात-दिन अतर गला है,
प्राण, मेरा गीत दीपक-सा जला है।

यह जगत की ठोकरे खाकर न टूटा,
यह समय की आँच से निकला अनूठा,
यह हृदय के स्नेह साँचे मे ढला है,
प्राण, मेरा गीत दीपक-सा जला है।

आह मेरी थी कि अबर कँप रहा था,
अश्रु मेरे थे कि तारा झँप रहा था,
यह प्रलय के मेघ-मारुत मे पला है,
प्राण, मेरा गीत दीपक-सा जला है।

जो कभी उचास झोको से लडा था,
जो कभी तम को चुनौती दे खड़ा था,
वह तुम्हारी आरती करने चला है,
प्राण, मेरा गीत दीपक-सा जला है।

५

आज ऑखो मे प्रतीक्षा फिर भरो तो ।

देखना किस ओर भुकता है जमाना,
गूँजता ससार मे किसका तराना,
प्राण, मेरी ओर पल भर तुम ढरो तो ;
आज ऑखो मे प्रतीक्षा फिर भरो तो ।

मै बताऊँ, शक्ति है कितनी पगो मे ?
मै बताऊँ, नाप क्या सकता डगों मे ?—
पंथ में कुछ ध्येय मेरे तुम धरो तो ;
आज ऑखो मे प्रतीक्षा फिर भरो तो ।

चीर वन-घन, भेद मरु जलहीन आऊँ,
सात सागर सामने हो, तैर जाऊँ,
तुम तनिक सकेत नयनो से करो तो ,
आज ऑखो मे प्रतीक्षा फिर भरो तो ।

राह अपनी मै स्वय पहचान लूँगा,
लालिमा उठती किधर से जान लूँगा,
कालिमा मेरे दृगो की तुम हरो तो ;
आज ऑखो मे प्रतीक्षा फिर भरो तो ।

६

आज फिर से तुम बुझा दीपक जलाओ ।

है कहाँ वह आग जो मुझको जलाए,
है कहाँ वह ज्वाल मेरे पास आए,
रागिनी, तुम आज दीपक राग गाओ ;
आज फिर से तुम बुझा दीपक जलाओ ।

तुम नई आभा नही मुझमे भरोगी,
नव विभा मे स्नान तुम भी तो करोगी,
आज तुम मुझको जगाकर जगमगाओ ;
आज फिर से तुम बुझा दीपक जलाओ ।

मै तमोमय, ज्योति की, पर, प्यास मुझको,
है प्रणय की शक्ति पर विश्वास मुझको,
स्नेह की दो बूँद भी तो तुम गिराओ ;
आज फिर से तुम बुझा दीपक जलाओ ।

कल तिमिर को भेद मै आगे बढ़ूँगा,
कल प्रलय की आँधियो से मै लड़ूँगा,
किंतु मुझको आज आँचल से बचाओ ,
आज फिर से तुम बुझा दीपक जलाओ ।

७

आज मन-वीणा, प्रिये, फिर से कसो तो ।

मै नही पिछली अभी झकार भूला,
मै नही पहले दिनो का प्यार भूला,
गोद मे ले मोद से मुझको लसो तो ;
आज मन-वीणा, प्रिये, फिर से कसो तो ।

हाथ धर दो, मै नया वरदान पाऊँ,
फूँक दो, बिछुडे हुए मै प्राण पाऊँ,
स्वर्ग का उल्लास, पल भर तुम हँसो तो ;
आज मन-वीणा, प्रिये, फिर से कसो तो ।

मौन के भी कठ मे मै स्वर भरूँगा,
एक दुनिया ही नई मुखरित करूँगा,
तुम अकेली आज अतर मे बसो तो ;
आज मन-वीणा, प्रिये, फिर से कसो तो ।

रात भागेगी, सुनहरा प्रात होगा,
जग उषा-मुसकान-मधु से स्नात होगा,
तेज शर बन तुम तिमिर घन मे धँसो तो ;
आज मन-वीणा, प्रिये, फिर से कसो तो ।

८

स्नेह दो तो आज लौ फिर सिर उठाए ।

देश-दुनिया ने मुझे बल से दबाया,
भाग्य भी लेकर तिमिर का भार आया,
अग्नि का कण मै रहा फिर भी बचाए ;
स्नेह दो तो आज लौ फिर सिर उठाए ।

प्रेम के पथ पर किरण मैने बिछाई,
किंतु मेरी चाल जगती को न भायी,
पर कहाँ था हाथ जो मुझको बुझाए ;
स्नेह दो तो आज लौ फिर सिर उठाए ।

कांति भी खोई, धुएँ से भी घिरा मै,
ज्योति के पथ से नही पीछे फिरा मै,
शत्रु भी मेरे रहे मुझको बढाए ;
स्नेह दो तो आज लौ फिर सिर उठाए ।

प्राण का यह दीप जलने के लिए है,
प्यार से अंतर पिघलने के लिए है,
आज हम दोनो नियम अपने निभाएँ ;
स्नेह दो तो आज लौ फिर सिर उठाए ।

६

आज तुम गत को भविष्यत मे बदल दो ।

एक युग मैंने गई की ओर देखा,
पर बदल पाया न उसकी एक रेखा,
रँग सकूँ नव चित्र जिसपर वह पटल दो ,
आज तुम गत को भविष्यत मे बदल दो ।

अश्रु-जल से सीचता सुधियाँ रहा मैं,
एक पत्ता भी न पाया लहलहा मैं,
जो खिले मुसकान से, सपने नवल दो ;
आज तुम गत को भविष्यत मे बदल दो ।

भूत की यह रात भयवाली, अकेली,
किंतु भावी को बना लाऊँ सहेली,
एक आशा की किरण का, प्राण, बल दो ,
आज तुम गत को भविष्यत मे बदल दो ।

हो चुका प्रस्थान का सामान सारा,
जा सका पर कब जिसे तुमने पुकारा,
तुम विदा को आज स्वागत मे बदल दो ;
आज तुम गत को भविष्यत मे बदल दो ।

१०

आज तुम उच्छ्वास को उल्लास कर दो ।

मै अतीत अजीत से जकडा हुआ हूँ,
भीति-चिता-चक्र मे पकडा हुआ हूँ,
श्रृखला को, प्राण, तुम भुजपाश कर दो ;
आज तुम उच्छ्वास को उल्लास कर दो ।

गीत गाओ, कोकिला शरमा रही है,
साँस मे मधु-मत्र शक्ति समा रही है,
आज तुम पतझार को मधुमास कर दो ;
आज तुम उच्छ्वास को उल्लास कर दो ।

पास आओ, चद्रमा के होठ चूमूँ,
कुतलो के बादलो के साथ घूमूँ,
आज तुम पाताल को आकाश कर दो ;
आज तुम उच्छ्वास को उल्लास कर दो ।

स्वप्न झूठे ही नही होते निरतर,
कल्पना आती कभी साकार बनकर,
आज शका को पुन विश्वास कर दो ;
आज तुम उच्छ्वास को उल्लास कर दो ।

११

प्राण, जीवन का नया अध्याय खोलो।

बीच ही मे रुक गई मेरी कहानी,
पॉव बैठी काटकर उठती जवानी,
भाग्य डोलेगा अगर तुम आज डोलो ;
प्राण, जीवन का नया अध्याय खोलो।

हाय, मेरे राग चुप हो सो गए है,
हाय, मेरे गीत गूँगे हो गए है,
वे उठे फिर बोल यदि तुम आज बोलो ;
प्राण, जीवन का नया अध्याय खोलो।

मुसकरा दो कोटि किरणे छूट छहरे,
अश्रु की दो बूँद, मरु मे सिधु लहरे,
विदु से तुम सिधु की निधि आज तोलो ;
प्राण, जीवन का नया अध्याय खोलो।

प्रेरणाओ की सरस अधिकारिणी तुम,
आज मेरे प्राण को कर दो ऋणी तुम,
स्नेह से अपने मुझे, सुभगे, भिगो लो ;
प्राण, जीवन का नया अध्याय खोलो।

१२

बाँध दो बिखरे सुरों को गान मे तुम ।

गीत ठुकराया हुआ, उच्छ्वास-क्रदन,
मधु मलय होता उपेक्षित हो प्रभजन,
बाँध दो तूफान को मुसकान मे तुम ;
बाँध दो बिखरे सुरो को गान मे तुम ।

कल्पनाएँ आज पगलाईं हुईं है,
भावनाएँ आज भरमाईं हुईं है,
बाँध दो उनको करुण आह्वान मे तुम ,
बाँध दो बिखरे सुरो को गान मे तुम ।

व्यर्थ कोई भाग जीवन का नही है,
व्यर्थ कोई राग जीवन का नही है,
बाँध दो सबको सुरीली तान मे तुम ;
बाँध दो बिखरे सुरो को गान मे तुम ।

मै कलह को प्रीति सिखलाने चला था,
प्रीति ने मेरे हृदय को ही छला था,
बाँध दो आशा पुन मन-प्राण मे तुम ;
बाँध दो बिखरे सुरो को गान मे तुम ।

१३

आज, मन-भावन, करो पावन वचन-मन ।

हृदय मदिर का खुला है द्वार आओ,
प्राण आओ, प्राण के आधार आओ,
आज मानो मूक नयनो का निमत्रण ,
आज, मन-भावन, करो पावन वचन-मन ।

साँस मे कुछ घटियाँ सी बज रही है,
मोतियो का अर्घ्य आँखे सज रही है,
है प्रतीक्षा मे तुम्हारी ही प्रतिक्षण ,
आज, मन-भावन, करो पावन वचन-मन ।

बन अकिचन पाँवडे पलके बिछाए,
कान अपना ध्यान आहट पर लगाए,
पुलकमय हर अग होने को समर्पण ,
आज, मन-भावन, करो पावन वचन-मन ।

शब्द रत्नागार मे है भाव खोए,
कौन-सी वह बोलती सपति सँजोएँ,
कर सके जो व्यक्त स्वागत, स्नेह, वदन ;
आज, मन-भावन, करो पावन वचन-मन ।

१४

प्राण की यह बीन बजना चाहती है।

चाहती किरणे धरा पर फैल जाना,
चाहती कलियाँ चटककर महमहाना,
फूल से हर डाल सजना चाहती है,
प्राण की यह बीन बजना चाहती है।

चाहती चिड़ियाँ बसती गीत गाना,
पत्तियाँ सदेश मधुऋतु का सुनाना,
वायु ऋतुपति नाम भजना चाहती है,
प्राण की यह बीन बजना चाहती है।

इस तरह मिलना हुआ सभव कही है,
शील मुझसे छूटनेवाला नही है,
तू नही सकोच तजना चाहती है;
प्राण की यह बीन बजना चाहती है।

कब भला ससार से डरता रहा मै,
मौज मे आया वही करता रहा मै,
बावरी, किसको बरजना चाहती है,
प्राण की यह बीन बजना चाहती है।

१५

आज आओ चाँदनी मे स्नान कर लो।

तापमय दिन में सदा जगती रही है,
रात भी जिसके लिए तपती रही है,
प्राण, उसकी पीर का अनुमान कर लो;
आज आओ चाँदनी मे स्नान कर लो।

चाँद से उन्माद टूटा पड़ रहा है,
लो, खुशी का गीत फूटा पड रहा है,
प्राण, तुम भी एक सुख की तान भर लो;
आज आओ चाँदनी मे स्नान कर लो।

धार अमृत की गगन से आ रही है,
प्यार से छाती उमड़ती जा रही है,
आज, लो, मादक सुधा का पान कर लो;
आज आओ चाँदनी मे स्नान कर लो।

अब तुम्हे डर-लाज किससे लग रही है,
आँख केवल प्यार की अब जग रही है,
मै मनाना जानता हूँ, मान कर लो;
आज आओ चाँदनी में स्नान कर लो।

१६

आज कितनी वासनामय यामिनी है !

दिन गया तो ले गया बातें पुरानी,
याद मुझको अब नहीं रातें पुरानी,
आज ही पहली निशा मनभावनी है ;
आज कितनी वासनामय यामिनी है !

घूँट मधु का है, नहीं झोंका पवन का,
कुछ नहीं मन को पता है आज तन का,
रात मेरे स्वप्न की अनुगामिनी है ;
आज कितनी वासनामय यामिनी है !

यह कली का हास आता है किधर से,
यह कुसुम का श्वास जाता है किधर से,
हर लता-तरु में प्रणय की रागिनी है ;
आज कितनी वासनामय यामिनी है !

दुग्ध-उज्ज्वल मोतियों से युक्त चादर
जो बिछी नभ के पलँग पर आज उसपर
चाँद से लिपटी लजाती चाँदनी है ;
आज कितनी वासनामय यामिनी है !

१७

हास मे तेरे नहाई यह जुन्हाई।

आ उजेली रात कितनी बार भागी,
सो उजेली रात कितनी बार जागी,
पर छटा उसकी कभी ऐसी न छाई,
हास मे तेरे नहाई यह जुन्हाई।

चाँदनी तेरे बिना जलती रही है,
वह सदा ससार को छलती रही है,
आज ही अपनी तपन उसने मिटाई,
हास मे तेरे नहाई यह जुन्हाई।

आज तेरे हास मे मै भी नहाया,
आज अपना ताप मैने भी मिटाया,
मुसकराया मै, प्रकृति जब मुसकराई;
हास मे तेरे नहाई यह जुन्हाई।

ओ अँधेरे पाख, क्या मुझको डराता,
अब प्रणय की ज्योति के मै गीत गाता,
प्राण मे मेरे समाई यह जुन्हाई;
हास मे तेरे नहाई यह जुन्हाई।

१८

है रुपहली रात, है सपने सुनहले।

शीतमय यह चाँदनी उसके लिए है,
प्रीतिमय यह यामिनी उसके लिए है,
जो दिवस की धूप सह ले, धूलि सह ले ;
है रुपहली रात, है सपने सुनहले।

मैं जलन का भाग अपना भोग आया
तब मिलन का यह मधुर सयोग आया,
दे चुका हूँ इन पलों का मोल पहले ,
है रुपहली रात, है सपने सुनहले।

गोद मे तुम हो, गगन मे चाँदनी है,
काल को यह भी निशा तो नापनी है,
मधु-सुधा की धार मे दो याम बह ले ;
है रुपहली रात, है सपने सुनहले।

कह रहा है यह कि मै आदर्श भूला,
कह रहा वह विश्व का सघर्ष भूला,
आज चाहे जो मुझे ससार कह ले ;
है रुपहली रात, है सपने सुनहले।

१६

आज, सगिनि, प्रीति के तुम गीत गाओ ।

सिसकियाँ बीता समय लेता रहेगा,
धमकियाँ ससार तो देता रहेगा,
आज तुम रसवाद मे रसना डुबाओ ;
आज, सगिनि, प्रीति के तुम गीत गाओ ।

शोर दुनिया मे हुआ है बद किस दिन,
हो सका इंसान है निर्द्वंद किस दिन,
तुम हृदय की बात कानो को सुनाओ ;
आज, सगिनि, प्रीति के तुम गीत गाओ ।

गान पृथ्वी का ध्वनित नभ ने किया है,
पर ध्वनित किस दिन हुआ मेरा हिया है,
आज तन्मय तान मन की तुम उठाओ ;
आज, सगिनि, प्रीति के तुम गीत गाओ ।

सर-सरित उमडे, गगन से मेघ बरसे,
सब जगह पर तप्त मेरे प्राण तरसे,
अब नयन जलधार निर्मल तुम बहाओ ;
आज, सगिनि, प्रीति के तुम गीत गाओ ।

२०

आज आ गाएँ, जगाएँ रात सोती।

मौन है आकाश, धरती मौन सारी,
नीद की छाई हुई सब पर खुमारी,
रात चुप है कुछ विगत सुधियाँ सँजोती,
आज आ गाएँ, जगाएँ रात सोती।

दिन हुआ सबने अलग निज राग छेडा,
कलह-कोलाहल मचा, झगडा-बखेडा,
गीत बनता साँस दो जब एक होती,
आज आ गाएँ, जगाएँ रात सोती।

रात खुश होगी हमे पा गीत गाते,
देख वह मुझको चुकी आहे उठाते,
देख वह तुझको चुकी आँसू पिरोती,
आज आ गाएँ, जगाएँ रात सोती।

डूबना है व्यर्थ पिछले आँसुओ मे,
डूबना है व्यर्थ छिछले आँसुओ मे,
रात के आँसू बनेगे प्रात मोती;
आज आ गाएँ, जगाएँ रात सोती।

२१

प्राण, केवल प्यार तुमको दे सकूँगा।

कोकिला अपनी व्यथा जिससे जताए,
सुन पपीहा पीर अपनी भूल जाए,
वह करुण उद्‌गार तुमको दे सकूँगा ;
प्राण, केवल प्यार तुमको दे सकूँगा।

प्राप्त मणि-कंचन नही मैंने किया है,
ध्यान तुमने कब वहाँ जाने दिया है,
आँसुओ का हार तुमको दे सकूँगा ;
प्राण, केवल प्यार तुमको दे सकूँगा।

सत्य ने छूने भला मुझको दिया कब,
किंतु उसने तुष्ट ही किसको किया कब,
स्वप्न का ससार तुमको दे सकूँगा;
प्राण, केवल प्यार तुमको दे सकूँगा।

फूल ने खिल मौन माली को दिया जो,
वीण ने स्वरकार को अर्पित किया जो,
मै वही उपहार तुमको दे सकूँगा ;
प्राण, केवल प्यार तुमको दे सकूँगा।

२२

स्वप्न में तुम हो, तुम्ही हो जागरण मे ।

कब उजाले में मुझे कुछ और भाया,
कब अँधेरे ने तुम्हें मुझसे छिपाया,
तुम निशा मे औ' तुम्ही प्रातः किरण में ;
स्वप्न मे तुम हो, तुम्ही हो जागरण में ।

जो कही मैंने तुम्हारी थी कहानी,
जो सुनी उसमें तुम्ही तो थी बखानी,
बात मे तुम औ' तुम्ही वातावरण मे ;
स्वप्न मे तुम हो, तुम्ही हो जागरण में ।

ध्यान है केवल तुम्हारी ओर जाता,
ध्येय में मेरे नही कुछ और आता,
चित्त मे तुम हो, तुम्ही हो चितवन में ;
स्वप्न मे तुम हो, तुम्ही हो जागरण में ।

रूप बनकर घूमता जो वह तुम्ही हो,
राग बनकर गूँजता जो वह तुम्हीं हो,
तुम नयन मे औ' तुम्ही अंतःकरण में ;
स्वप्न मे तुम हो, तुम्ही हो जागरण में ।

२३

प्राण, कह दो, आज तुम मेरे लिए हो।

मैं जगत के ताप से डरता नहीं अब,
मैं समय के शाप से डरता नहीं अब,
आज कुंतल छाँह मुझपर तुम किए हो;
प्राण, कह दो, आज तुम मेरे लिए हो।

रात मेरी, रात का शृंगार मेरा,
आज आधे विश्व से अभिसार मेरा,
तुम मुझे अधिकार अधरों पर दिए हो;
प्राण, कह दो, आज तुम मेरे लिए हो।

वह सुरा के रूप से मोहे भला क्या,
वह सुधा के स्वाद से जाए छला क्या,
जो तुम्हारे होठ का मधु-विष पिए हो;
प्राण, कह दो, आज तुम मेरे लिए हो।

मृत-सजीवन था तुम्हारा तो परस ही,
पा गया मैं बाहु का बंधन सरस भी,
मैं अमर अब, मत कहो केवल जिए हो;
प्राण, कह दो, आज तुम मेरे लिए हो।

२४

प्रात-मुकुलित फूल-सा है प्यार मेरा ।

ठीक है मैंने कभी देखा अँधेरा,
किंतु अब तो हो गया फिर से सबेरा,
भाग्य-किरणो ने छुआ ससार मेरा ;
प्रात-मुकुलित फूल-सा है प्यार मेरा ।

तप्त आँसू से कभी मुख म्लान होता,
किंतु अब तो शीत जल मे स्नान होता,
राग-रस-कण से धुला संसार मेरा ;
प्रात-मुकुलित फूल-सा है प्यार मेरा ।

आह से मेरी कभी थे पत्र झुलसे,
किंतु मेरी साँस पाकर आज हुलसे,
स्नेह-सौरभ से बसा ससार मेरा ;
प्रात-मुकुलित फूल-सा है प्यार मेरा ।

एक दिन मुझमे हुई थी मूर्त जडता,
किंतु बरबस आज मै झरता, बिखरता,
है निछावर प्रेम पर संसार मेरा ;
प्रात-मुकुलित फूल-सा है प्यार मेरा ।

२५

प्यार के पल मे जलन भी तो मधुर है।

जानता हूँ दूर है नगरी प्रिया की,
पर परीक्षा एक दिन होनी हिया की,
प्यार के पथ की थकन भी तो मधुर है;
प्यार के पल मे जलन भी तो मधुर है।

आग ने मानी न बाधा शैल-वन की,
गल रही भुज पाश मे दीवार तन की,
प्यार के दर पर दहन भी तो मधुर है;
प्यार के पल मे जलन भी तो मधुर है।

साँस मे उत्तप्त आँधी चल रही है,
किंतु मुझको आज मलयानिल यही है,
प्यार के शर की शरण भी तो मधुर है;
प्यार के पल मे जलन भी तो मधुर है।

तृप्ति क्या होगी अधर के रस कणो से,
खीच लो तुम प्राण ही इन चुबनों से,
प्यार के क्षण मे मरण भी तो मधुर है;
प्यार के पल मे जलन भी तो मधुर है।

२६

इस पुरातन प्रीति को नूतन कहो मत ।

की कमल ने सूर्य-किरणो की प्रतीक्षा,
ली कुमुद की चाँद ने रातो परीक्षा,
इस लगन को, प्राण, पागलपन कहो मत ;
इस पुरातन प्रीति को नूतन कहो मत ।

मेह तो प्रत्येक पावस मे बरसता,
पर पपीहा आ रहा युग-युग तरसता,
प्यार का है, प्यास का क्रदन कहो मत ;
इस पुरातन प्रीति को नूतन कहो मत ।

कूक कोयल पूछती किसका पता है,
वह बहारों की सदा से परिचिता है,
इस रटन को मौसमी गायन कहो मत ;
इस पुरातन प्रीति को नूतन कहो मत ।

विश्व की दो कामनाएँ थी विचरती,
एक थी बस दूसरे की खोज करती,
इस मिलन को सिर्फ भुजबधन कहो मत ;
इस पुरातन प्रीति को नूतन कहो मत ।

२७

आज रिमझिम मेघ, रिमझिम है नयन भी।

पास मेरे तुम, तुम्हारे पास मस्ती,
बादलों की गोद मे बिजली विहँसती,
मैं भरा-उँमडा, भरा-उँमडा गगन भी ;
आज रिमझिम मेघ, रिमझिम है नयन भी।

कौन कोना है गगन का आज सूना,
कौन कोना प्राण-मन का आज सूना,
पर बरसता मैं, बरसता है गगन भी ;
आज रिमझिम मेघ, रिमझिम है नयन भी।

अश्रु दुख के जबकि अपना हाथ भीगे,
अश्रु सुख के जबकि कोई साथ भीगे,
भीगती तुम, भीगती जाती अवनि भी ;
आज रिमझिम मेघ, रिमझिम है नयन भी।

प्यार का यह भार लेना भी मधुर है,
प्यार का यह भार देना भी मधुर है,
ले रही है भार अबर का अवनि भी ;
आज रिमझिम मेघ, रिमझिम है नयन भी।

२८

मै प्रतिध्वनि सुन चुका, ध्वनि खोजता हूँ ।

मौन मुखरित हो गया, जय हो प्रणय की,
पर नही परितृप्त है तृष्णा हृदय की,
पा चुका स्वर, आज गायन खोजता हूँ ;
मै प्रतिध्वनि सुन चुका, ध्वनि खोजता हूँ ।

तुम समर्पण बन भुजाओ मे पडी हो,
उम्र इन उद्भ्रात घडियो की बडी हो,
पा गया तन, आज मै मन खोजता हूँ,
मै प्रतिध्वनि सुन चुका, ध्वनि खोजता हूँ ।

है अधर मे रस मुझे मदहोश कर दो,
किंतु मेरे प्राण मे सतोष भर दो,
मधु मिला है, मै अमृतकण खोजता हूँ ;
मै प्रतिध्वनि सुन चुका, ध्वनि खोजता हूँ ।

जी उठा मै, और जीना प्रिय बडा है,
सामने, पर, ढेर मुरदों का पडा है,
पा गया जीवन, सजीवन खोजता हूँ ;
मै प्रतिध्वनि सुन चुका, ध्वनि खोजता हूँ ।

२६

प्यार की तो भूल भी अनुकूल मेरे।

फूल मिलते रोक ही रखते रिझाते,
शूल हैं प्रतिपल मुझे आगे बढाते,
इस डगर के शूल भी अनुकूल मेरे ;
प्यार की तो भूल भी अनुकूल मेरे।

खोजते मकरद जा पहुँचा मरुस्थल,
किंतु मेरी आँख का सुख-सार परिमल,
बन चुकी थी रास्ते की धूल मेरे,
प्यार की तो भूल भी अनुकूल मेरे।

जिदगी भर, मानता, काँटे बटोरे,
क्या नही स्वागत मुहब्बत के निहोरे,
पखुरी से होड लेते शूल मेरे,
प्यार की तो भूल भी अनुकूल मेरे।

जग मुझे टेढी नजर से देखता है,
और, लो, पाषाण मुझपर फेकता है,
जो उसे पत्थर वही तो फूल मेरे ;
प्यार की तो भूल भी अनुकूल मेरे।

३०

जानता हूँ प्यार, उसकी पीर को भी।

बॉह तुमने डाल दी ज्यो फूल माला,
सग मे, पर, नाग का भी पाश डाला,
जानता गलहार हूँ, जंजीर को भी;
जानता हूँ प्यार, उसकी पीर को भी।

है अधर से कुछ नही कोमल कही पर,
किंतु इनकी कोर से घायल जगत भर,
जानता हूँ पखुरी, शमशीर को भी;
जानता हूँ प्यार, उसकी पीर को भी।

कौन आया है सुरा का स्वाद लेने,
जो कि आया है हृदय का रक्त देने,
जानता मधुरस, गरल के तीर को भी;
जानता हूँ प्यार, उसकी पीर को भी।

तीर पर जो उठ लहर मोती उगलती,
बीच मे वह फाड़कर जबड़े निगलती,
जानता हूँ तट, उदधि गंभीर को भी;
जानता हूँ प्यार, उसकी पीर को भी।

३१

शूल तो जैसे विरह वैसे मिलन में।

थी मुझे घेरे बनी जो कल निराशा,
आज आशका बनी, कैसा तमाशा,
एक से है एक बढकर, पर, चुभन मे ;
शूल तो जैसे विरह वैसे मिलन मे ।

देखकर नीरस गगन रोया पपीहा,
मेह मे भी तो कही खोया पपीहा,
फर्क पानी से नही पडता लगन मे ;
शूल तो जैसे विरह, वैसे मिलन मे ।

आम पर तो मंजरी पर मंजरी है,
दर्द से आवाज कोयल की भरी है,
कब समाए स्वप्न मधुऋतु के सेहन मे ;
शूल तो जैसे विरह वैसे मिलन मे ।

फूल को ले चोंच मे बुलबुल बिलखती,
एक अचरज से उसे दुनिया निरखती,
वह बदल पाई नही अब तक सुमन मे ;
शूल तो जैसे विरह वैसे मिलन में ।

३२

प्यार से, प्रिय, जी नही भरता किसीका ।

प्यास होती तो सलिल मे डूब जाती,
वासना मिटती न तो मुझको मिटाती,
पर नही अनुराग है मरता किसीका ;
प्यार से, प्रिय, जी नही भरता किसीका ।

तुम मिली तो प्यार की कुछ पीर जानी,
और ही मशहूर दुनिया मे कहानी,
दर्द कोई भी नही हरता किसीका ,
प्यार से,प्रिय, जी नही भ्ररता किसीका ।

पॉव बढते, लक्ष्य उनके साथ बढता,
और पल को भी नही यह क्रम ठहरता,
पॉव मजिल पर नही पडता किसीका ,
प्यार से, प्रिय, जी नहीं भरता किसीका ।

स्वप्न से उलझा हुआ रहता सदा मन,
एक ही इसका मुझे मालूम कारण,
विश्व सपना सच नही करता किसीका ,
प्यार से, प्रिय, जी नही भरता किसीका ।

३३

गीत मेरे, देहरी के दीप-सा बन ।

एक दुनिया है हृदय में, मानता हूँ,
वह घिरी तम से, इसे भी जानता हूँ,
छा रहा है किंतु बाहर भी तिमिर घन ;
गीत मेरे, देहरी के दीप-सा बन ।

प्राण की लौ से तुझे जिस काल बारूँ,
और अपने कंठ पर तुझको सँवारूँ,
कह उठे संसार, आया ज्योति का क्षण ;
गीत मेरे, देहरी के दीप-सा बन ।

दूर कर मुझमें भरी तू कालिमा जब,
फैल जाए विश्व में भी लालिमा तब,
जानता सीमा नहीं है अग्नि का कण ;
गीत मेरे, देहरी के दीप-सा बन ।

जग विभामय तो न काली रात मेरी,
मैं विभामय तो नहीं जगती अँधेरी,
यह रहे विश्वास मेरा, यह रहे प्रण ;
गीत मेरे, देहरी के दीप-सा बन ।

मिलन यामिनी

मध्य भाग

१

मै गाता हूँ इसलिए कि पूरब से सुरभित
जो सोना शुभ्र-सलोना नित्य बरसता है,
उसको कोई बस प्रात किरण मत कह बैठे।

(१)

जब कोई अपने कोटि करो को कर बाहर
अपने तप का चिर सचित कोष लुटाता है,
जब उसका सौरभ-यश कलि-कुसुमो के मुख से
विस्तृत बसुधा के कण-कण मे छा जाता है,

नब जाकर तम का काला, भारी, भयकारी
पर्दा ऊपर को उठता और सिमटता है;

इतने उत्सर्गो, उल्लासो का यह अवसर,
अचरज है मुझको, कैसे प्रति दिन आता है ।

कवि वह है जिसके मन को चोट पहुँचती है
जब होती जग मे सुदरता की अवहेला,
अनजाने भी अपमान किसीका हो जाता,
अनजाने भी अपराध कभी हो जाते है,

मै गाता हूँ इसलिए कि पूरब से सुरभित
जो सोना शुभ्र-सलोना नित्य बरसता है,
उसको कोई बस प्रात किरण मत कह बैठे ।

(२)

रजनी मे आँखे सपनो से बहला भी लो,
दिन देन दूसरी ही कुछ माँगा करता है,
देखे अँधियारा चीर निकलता है कोई,
देखे कोई अतर की पीडा हरता है,

सारी आशा-प्रत्याशाओ की परवशता
मे मन गलकर निर्मम बूदो मे ढल जाता,

देखें मिलकर क्या देता जबकि प्रतीक्षा मे
पलको का आँचल मुक्ताहल से भरता है,

कवि वह है जिसके उर मे आहे उठती है
जब होती मिलनातुर घड़ियों की अवहेला,
आँसू का कुछ भी मोल नही बाजारो मे,
क्यो इस कारण कोई उसका उपहास करे,

मै गाता हूँ इसलिए कि विरही के दृगमे
जो विदु सुधा का सिधु समेट छलकता है,
उसको कोई खारा जलकण मत कह बैठे ।

मै गाता हूँ इसलिए कि पूरब से सुरभित
जो सोना शुभ्र-सलोना नित्य बरसता है,
उसको कोई बस प्रात किरण मत कह बैठे ।

(३)

जब जगती छाती मे अभाव की चेतनता
तब निखिल सृष्टि का मूल केद्र ही हिलता है,
वह ठडी साँसे खीच बिलख तब उठती है
जब एकाकी को अपना सगी मिलता है,
जलते अधरो कुछ खोज रही-सी बाँहो मे
धरती की सारी बेचैनी जाहिर होती,
जब प्राणो का विनिमय प्राणो से होता है
अबर के दिल का पकज ही तब खिलता है,

कवि वह है जिसका अतर विगलित होता है
जब होती जग मे प्यास-प्रणय की अवहेला,
शब्दो की निर्धन दुनिया मे अक्सर होता
कुछ कहते है पर मतलब कुछ से होता है,

मै गाता हूँ इसलिए कि प्रेमी के मन में
जो प्यार अनत, अपार, अगाध उमड़ता है,
उसको कोई व्यामोह-व्यसन मत कह बैठे ।

मै गाता हूँ इसलिए कि पूरब से सुरभित
जो सोना शुभ्र-सलोना नित्य बरसता है,
उसको कोई बस प्रात किरण मत कह बैठे ।

२

मैं रखता हूँ हर पाँव सुदृढ विश्वास लिए,
ऊबड़-खाबड तम की ठोकर खाते-खाते
इनसे कोई रक्ताभ किरण फूटेगी ही।

(१)

तम कहता है मुझ महानिशा
की दिशा नही तुम पाओगे,
ज्यादा सभव है भूल-भटक
फिर उस जगह आ जाओगे,

थे चले जहाँ से पहले दिन
मन मे तूफानी जोश लिए—

कंचन की नगरी मे जाकर
माणिक के दीप जलाओगे!

है बहुत सिखाया जगती के
कडुए अनुभव ने पर अब भी—

मैं रखता हूँ हर पाँव सुदृढ़ विश्वास लिए,
ऊबड-खाबड तम की ठोकर खाते-खाते
इनसे कोई रक्ताभ किरण फूटेगी ही।

(२)

जो भेंट चला था मैं लेकर
हाथों में कब की कुम्हलाई,
नयनों ने सींचा उसे बहुत
लेकिन वह फिर भी मुरझाई,

तब से पथ-पुष्पों से निर्मित
कितनी मालाएं सूख चुकी,

जिस मग से मैं आया उसपर
पाओगे बिखरी-बिखराईं,

कुम्हला न सकी, मुरझा न सकी
लेकिन अर्चन की अभिलाषा,

मैं चुनता हूँ हर फूल अटल विश्वास लिए,
ये पूज न पाएँ प्रेय चरण लेकिन दुनिया
इनकी श्रद्धा को एक समय पूजेगी ही ।

मै रखता हूँ हर पॉव सुदृढ विश्वास लिए,
ऊबड-खाबड तम की ठोकर खाते-खाते
इनसे कोई रक्ताभ किरण फूटेगी ही।

(३)

जब इस पथ पर थे पॉव दिए
तब चीख पडा था यो अबर—
इसकी मजिल पाई जाती
केवल मरकर, केवल मिटकर !

फिर भी न डरा, हिचका, झिझका,
मेरा मन बदा सैलानी,
जिदा रहना क्या इतना ही
बस डोले सॉसो का लगर !

है मेरा पूरा सफर नपा
मेरी छाती की धडकन से—

मै लेता हूँ हर साँस अमर विश्वास लिए,
मै पहुँच न पाऊँ जीते जी अपनी मजिल,
पर मरने पर मजिल मुझ तक पहुँचेगी ही ।

मै रखता हूँ हर पाँव सुदृढ विश्वास लिए,
ऊबड-खाबड तम की ठोकर खाते-खाते
इनसे कोई रक्ताभ किरण फूटेगी ही ।

(४)

अज्ञात नही है यह मुझको
गाया करता निशि-दिन सागर,
गाया करता दिन-रात अनिल
हरहर-हरहर, मरमर, मरमर,
जो मौन महा सगीत गगन
को पुलकाकुल नित रखता है,
उससे भी मै चिर परिचित हूँ—
लेकिन मेरा भी अपना स्वर ।

मेरी सत्ता का अंश अमर
यह क्षीण सबो से होकर भी।

मै गाता हूँ हर गीत मधुर विश्वास लिए,
लहराती अबर पर, तारो से टकराती
ध्वनि पास तुम्हारे एक समय गूँजेगी ही।

मै रखता हूँ हर पॉव सुदृढ विश्वास लिए,
ऊबड़-खाबड तम की ठोकर खाते-खाते
इनसे कोई रक्ताभ किरण फूटेगी ही।

३

प्यार, जवानी, जीवन इनका
जादू मैंने सब दिन माना।

(१)

यह वह पाप जिसे करने से
भेद भरा परलोक डराता,
यह वह पाप जिसे कर कोई
कब जग के दृग से बच पाता,

यह वह पाप झगडती आई
जिससे बुद्धि सदा मानव की,
यह वह पाप मनन भी जिसका
कर लेने से मन शरमाता,

तन सुलगा, मन द्रवित, भ्रमित कर
बुद्धि, लोक, युग सब पर छाता,

हार नही स्वीकार हुआ तो
प्यार रहेगा ही अनजाना।

प्यार, जवानी, जीवन इनका
जादू मैंने सब दिन माना।

(२)

डूब किनारे जाते है जब
नद्दी मे जोबन आता है,
कूल-तटो मे बदी होकर
लहरो का दम घुट जाता है,

नाम दूसरा केवल जगती
जग लगी कुछ जजीरो का,

जिनके अदर तान-तरगे
उनका जग से क्या नाता है,

मन के राजा हो तो मुझसे
लो वरदान अमर यौवन का,

नही जवानी उसने जानी
जिसने पर का वधन जाना ।

प्यार, जवानी, जीवन इनका
जादू मैने सब दिन माना ।

(३)

फूलो से, चाहे आँसू से
मैंने अपनी माला पोही,
किंतु उसे अर्पित करने को
बाट सदा जीवन की जोही,

गई मुझे ले मृत्यु भुलावा
दे अपनी दुर्गम घाटी में,
किंतु वहाँ पर भूल-भटककर
खोजा मैंने जीवन को ही,

'जीने की उत्कट इच्छा मे
था मैंने, 'आ मौत' पुकारा।

वर्ना मुझको मिल सकता था
मरने का सौ बार बहाना।

प्यार, जवानी, जीवन इनका
जादू मैंने सब दिन माना।

४

(१)

बहती है मधुवन मे अब पतझर की बयार ।

जिनकी छाया में काट दिए थे दिन दुख के,
जिनकी छाया मे देखे थे सपने सुख के,

अब इने-गिने उन पत्तो के है दिवस चार ।
बहती है मधुवन मे अब पतझर की बयार ।

(२)

देखो पीलापन इनपर छाया जाता है,
मधुवन का मधुवन, लो, मुरझाया जाता है,
ले गया काल इनकी सब श्री-सुखमा उतार,
बहती है मधुवन मे अब पतझर की बयार।

(३)

जो एक डाल पर एक साथ झूले-डोले,
जो एक साथ प्रात. किरणो की जय बोले,
वे अलग-थलग गिरते अपनी सुध-बुध बिसार,
बहती है मधुवन मे अब पतझर की बयार।

(४)

पीले पत्तों के नीचे अकुर की लाली,
नूतन जीवन का चिह्न लिए डाली-डाली,
तरुवर-तरुवर पर लक्षित यौवन का उभार,
बहती है मधुवन मे अब पतझर की बयार।

(५)

जिन झोंको से कुम्हलाए पत्ते झरते हैं,
उनसे ही बल नव पल्लव सचित करते हैं,
जिनसे लुटता, उनसे ही बँटता भी सिगार,
बहती है मधुवन मे अब पतझर की बयार।

(६)

सौ बार शिशिर मधुवन के ऑगन मे आए,
पर वह जादू की शक्ति न मधुवन से जाए,
जो नूतन से करती पुराण का परिष्कार,
बहती है मधुवन मे अब पतझर की बयार।

५

पतझर से डरे जिसके उर में
नव यौवन का उन्माद न हो।

(१)

पीले मुरझाए चेहरो मे
यौवन ही लाली भरता है,
कितनी ही बार लुटे लेकिन
श्री-शोभा सचित करता है,

पतझर की पतित करतूतो से
तरु-तरु परिचित, डाली-डाली;

पतझर से डरे जिसके उर में
नव यौवन का उन्माद न हो।

(२)

वह देखो पलाशो ने वन से
उठ क्रांति पताका फहराई,
वह देखो उदास खडो डालों
पर क्या हरियाली गहराई,

वह देखो बसती फूलों के
ऊपर मँडराती अलिमाला,

पतझर से डरे जिसको मधुऋतु
के सौ सपनो की याद न हो।

पतझर से डरे जिसके उर मे
नव यौवन का उन्माद न हो।

(३)

वह सुन लो नया स्वर कोकिल का
है गूँज रहा अमराई मे,
वह सुन लो नकल होती उसकी
उपवन, बीथी, अँगनाई मे,

हर जीवन के स्वर की प्रतिध्वनि
आती है अगणित कठों से;

पतझर के सूनेपन से डरे
जिसके अंतर में नाद न हो।

पतझर से डरे जिसके उर मे
नव यौवन का उन्माद न हो।

६

(१)

वह कूकी, लाईं साँस नईं मधुवन में ।

पीलेपन मे बदल गईं थी
पत्तों की हरियाली,
छोड़ रही थी वह भी क्षण-क्षण
तरु की डाली-डाली,

शाखा के कंकाल खडे थे
गगन-पटल के आगे;
वह कूकी, लाईं साँस नईं मधुवन मे ।

(२)

कूक एक—जड जग के अदर
जीवन रस लहराया,
कूक एक—तरुओ के तन का
रोम-रोम फहराया,

अकुर-अकुर की आँखो में
सौ बसत के सपने,
वह कूकी, लाई आस नई मधुवन मे।
वह कूकी, लाई साँस नई मधुवन मे।

(३)

कूक एक—कल्पना अनूठी
जाग उठी आँखो मे,
चढते यौवन के अल्हड पग
बदल गए पाँखो मे,

चला समीरण मजरियो का
लेकर सरस निमंत्रण,
वह कूकी, लाई बास नई मधुवन मे।
वह कूकी, लाई साँस नई मधुवन मे।

(४)

कूक एक—ताजी हो आई
मन मे बात पुरानी,
कूक एक—रुक गई ठिठककर
ढलती हुई जवानी,

मदिरालय ने कहा, एक-दो
घूँट और पीता जा—
वह कूकी, लाई प्यास नई मधुवन मे।
वह कूकी, लाई साँस नई मधुवन मे।

७

सहसा बिरवो मे पात लगे,
सहसा बिरही की आग जगी ।

(१)

जब मैंने मरकत पत्रों को
पियराते, मुरझाते देखा,
जब मैंने पतझर को बरबस
मधुवन में धँस जाते देखा,

तब अपनी सूखी लतिका पर
पछताते मुझको लाज लगी,

जब मैंने तरु-कंकालों को
अपने से भय खाते देखा,

पर ऐसी एक बयार बही,
कुछ ऐसा जादू-सा उतरा,

जिससे बिरवों में पात लगे,
जिससे अंतर में आह जगी।

सहसा बिरवों में पात लगे,
सहसा बिरही की आग जगी।

(२)

कुछ अनजाने सुख से सिहरी
सब सूखी-भूखी शाखाएँ,
उनपर ऐसी लाली दौडी
जैसे गालो पर शरमाए

उस बाला के जिसका कोई
मुख चुबन पहली बार करे,

यह देख समा मेरी सहमी
आँखो मे आँसू भर आए,

क्या था उस मादक लाली मे,
क्या, उस मोहक हरियाली मे,

जिससे छाती मे तीर चुभे,
जिससे अंतर मे चाह जगी।

सहसा बिरवो मे पात लगे,
सहसा बिरही की आग जगी।

(३)

जब अखिल प्रकृति ही बैठी थी
सेती सूनेपन की दुनिया,
तब अचरज क्या जो चुप होकर
बैठा यह गीतो का गुनिया,

कोयल कूकी जैसे उसको
जीवन का कोई भेद मिला,

कानो मे फिर से गूँजी कुछ
भूली-भूली-सी प्रतिध्वनियाँ,

क्या था उस कूक बहारी मे,
क्या, उस मधुमय किलकारी मे,

जिससे साँसो मे राग उठा,
जिससे अतर मे डाह जगी ।

सहसा बिरवो मे पात लगे,
सहसा बिरही की आग जगी ।

८

डालें पलाश की फूट पडी,

प्रिय, छूट गया धीरज मेरा ।

(१)

मैने तो यह गुन रक्खा था
जब साँस बसती आएगी,
तब अपने सौ बरदानो मे
वह साथ तुम्हे भी लाएगी,

पत्ते-पत्ते ने टूट यही
मेरे कानो में बात कही,

कब समझा था मेरी आशा
यो अपने मुँह की खाएगी,

यह सोच, बहार नही आई,
धोखे मे अपने को रक्खा;

सहसा रोमावलि सिहर उठी,
प्रिय छूट गया धीरज मेरा;

डाले पलाश की फूट पडी,
प्रिय, छूट गया धीरज मेरा।

(२)

मैंने तो यह गुन रक्खा था
जब भृगो की ध्वनि गूँजेगी,
तब नीरव घडियो मे सेई
मेरी साधे भी पूजेगी,

हर गूँगे स्वर के अदर से
स्वर एक निरतर सुनता था,

रुनझुन करती वह आती है
जो पीर तुम्हारी बूझेगी,

कितना कानो को रूँधूँ मै,
बौरे आमो पर बौराए

भौरो की पाँते टूट पडी
प्रिय, छूट गया धीरज मेरा,

डाले पलाश की फूट पडी,
प्रिय, छूट गया धीरज मेरा ।

(३)

शाखो ने कल्ले फोडे पर
देरी उनके हरिआने मे,
कुछ काल अभी तक बाकी है
सचमुच मधुऋतु के आने मे,

जलि आतुर गध-पराग रहित
कलियो से भी बँध जाते है,

मन मान विलब अभी कुछ है
खगकुल के खुलकर गाने मे,

अपने को बहला रखने की
आखिर कुछ हद भी होती है,

कोकिल कुहु-कुहुकर कूक पडी
प्रिय, छूट गया धीरज मेरा,

डाले पलाश की फूट पडी,
प्रिय, छूट गया धीरज मेरा ।

९

अनगिनत बसती फूलो के
गुच्छो मे गिनती के पत्तों
का अमलतास फिर एक बार
कर जाता है मुझको उदास !

(१)

यौवन की पागल घड़ियो मे
देखा था मैंने यह सपना,
मै संग प्रिया के बैठा हूँ
सिर पर सुमनो का छत्र तना,

पत्रो की निर्धन छाया मे
साधारण दुनिया मिलती है,

मेरी वह साध पुराने को
यह सोने का ससार बना,

पर यह बहार भी इतजार
का किस्सा बनकर जाती है,

अनगिनत बसती फूलो के
गुच्छो मे गिनती के पत्तो
का अमलतास फिर एक बार
कर जाता है मुझको उदास।

(२)

इन कचन-पीले पुष्पो से
यदि भाग्य हमारे खिल पाते,
दो उमडे-घुमडे बादल के
टुकडो से यदि हम मिल पाते,

हर चितवन मे, हर चुबन मे,
हर चुबक-से आलिगन मे,

प्रेयसि, बरबस कितने रस के
मदमाते निर्भर बह जाते ।

मन की मिठास ही घुट-घुटकर
भीतर-भीतर विष बनती है

अनगिनत बसती फूलों के
गुच्छो मे मधुपूरित छत्तो
का अमलतास फिर एक बार
कर जाता है मुझको उदास

अनगिनत बसती फूलो के
गुच्छो मे गिनती के पत्तो
का अमलतास फिर एक बार
कर जाता है मुझको उदास।

(३)

मेरी अभिलाषाएं बिखरी
कुसुमो की सुदरता बनकर,
मेरे चितन के क्षण कितने
निखरे छाया मे छन-छनकर,

डाले भुज हे जिनको मेरी
आशाओ ने फैलाए है,

विश्वास अटल मेरा बैठा
इसकी जड की दृढता बनकर,

यह वृक्ष नही जिसपर पतझर
मधुऋतु का शासन चलता है;

प्रत्याशाओ के भूलो मे
भूला-भूला स्वप्निल तत्त्वो
का अमलतास फिर एक बार
कर जाता है मुझको उदास।

अनगिनत बसती फूलो के
गुच्छो मे गिनती के पत्तो
का अमलतास फिर एक बार
कर जाता है मुझको उदास।

१०

इन चिकने, ताजे, हरे, नए
पत्तो के साए मे, सुमने,
फिर प्यार नया हो सकता है।

(१)

हर दत समय का जो लगता,
मानो, विष दत नही होता,
दुख मानव के मन के ऊपर
सब दिन बलवत नही होता,

आहे उठती, आँसू झडते,
सपने पीले पडते लेकिन

जीवन मे पतझर आने से
जीवन का अत नही होता,

यौवन-मधुऋतु का स्वर उठकर
अदर से मुझसे कहता है,

इन चिकने, ताजे, हरे, नए
पत्तो के साए मे, सुमने,
फिर प्यार नया हो सकता है।

(२)

अबर ने मधुवन से पूछा,
तू आज बना मस्ताना क्यो,
बोला, कोयल से यह पूछो,
उसका पुरजोश तराना क्यो,

उसने पिक से यह प्रश्न किया,
बोली, इन डालो से पूछो,

नूतन पत्तो के साथ सजी
तजकर परिधान पुराना क्यो,

डालो ने छाया मे बैठे
हमको-तुमको बस दिखलाया,

दो दूर दिलो के मिलने से
भी इतना अतर भरता है,
ससार नया हो सकता है।

इन चिकने, ताजे, हरे, नए
पत्तो के साए मे, सुमने,
फिर प्यार नया हो सकता है।

(३)

हम अपनी मस्ती मे बहके
मधुबात बही बहकी-बहकी,
चुबन के स्वर सकेतो पर
बन की सारी चिडियाँ चहकी,
अनुकरण हमारे शब्दो का
अस्फुट, लो, पल्लव दल करते,
साँसो से साँसे मिलनी थी
खुलकर, खिलकर कलियाँ महकी,

मायूस नजर से कब किसने
दुनिया की सच्चाई देखी;

आशा की पुलकित आँखो से
जग, जीवन और जमाने का
दीदार नया हो सकता है ।

इन चिकने, ताजे, हरे, नए
पत्तों के साए मे, सुमने,
फिर प्यार नया हो सकता है ।

११

गरमी में प्रात.काल पवन
बेला से खेला करता जब
तब याद तुम्हारी आती है।

(१)

जब मन से लाखों बार गया-
आया सुख सपनो का मेला,
जब मैंने घोर प्रतीक्षा के
युग का पल-पल जल-जल झेला,

मिलने के उन दो यामो ने
दिखलाईं अपनी परछाईं,

वह दिन ही था बस दिन मुझको,
वह बेला थी मुझको बेला;

उड़ती छाया-सी वे घड़ियाँ
बीती कबकी लेकिन तब से,

गरमी में प्रातःकाल पवन
बेला से खेला करता जब
तब याद तुम्हारी आती है।

(२)

तुमने जिन सुमनो से उस दिन
केशों का रूप सजाया था,
उनका सौरभ तुमसे पहले
मुझसे मिलने को आया था,

वह गध गई गठबध करा
तुमसे, उन चचल घडियो से,

उस सुख से जो उस दिन मेरे
प्राणो के बीच समाया था,

वह गध उठा जब करती है
दिल बैठ न जाने जाता क्यो,

गरमी मे प्रात.काल पवन
प्रिय ठडी आहे भरता जब
तब याद तुम्हारी आती है।

गरमी मे प्रात काल पवन
बेला से खेला करता जब
तब याद तुम्हारी आती है।

(३)

चितवन जिस ओर गई उसने
मृदु फूलो की वर्षा कर दी,
मादक मुसकानो ने मेरी
गोदी पखुरियो से भर दी,

हाथो मे हाथ लिए, आए
अजलि मे पुष्पो के गुच्छे,

जब तुमने मेरे अधरो पर
अधरो की कोमलता धर दी,

कुसुमायुध का शर ही मानो
मेरे अतर मे पैठ गया !

गरमी मे प्रात काल पवन
कलियो को चूम सिहरता जब
तब याद तुम्हारी आती है।

गरमी मे प्रात काल पवन
बेला से खेला करता जब
तब याद तुम्हारी आती है।

१२

ओ पावस के पहले बादल,
उठ उमड-गरज, घिर घुमड-चमक
मेरे मन-प्राणों पर बरसो ।

(१)

यह आशा की लतिकाएँ थी
जो बिखरी आकुल-व्याकुल सी,
यह स्वप्नों की कलिकाएँ थी
जो खिलने से पहले झुलसी,

यह मधुवन था, जो सूना-सा
मरुथल दिखलाई पड़ता है,

इन सूखे कूल-किनारो मे
थी एक समय सरिता हुलसी,

आँसू की बूँदे चाट कही
अतर की तृष्णा मिटती है;

ओ पावस के पहले बादल,
उठ उमड-गरज, घिर घुमड-चमक
मेरे मन-प्राणो पर बरसो ।

(२)

मेरे उच्छ्वास बने शीतल
तो जग मे मलयानिल डोले,
मेरा अतर लहराए तो
जगती अपना कल्मष धो ले,

सतरगा इंद्रधनुष निकले
मेरे मन के धुँधले पट पर,
तो दुनिया सुख की, सुखमा की
मगल वेला की जय बोले,

सुख है तो औरों को छूकर
अपने से सुखमय कर देगा,

ओ वर्षा के हर्षित बादल,
उठ उमड-गरज, घिर घुमड-चमक
मेरे अरमानो पर बरसो ।

ओ पावस के पहले बादल,
उठ उमड-गरज, घिर घुमड-चमक
मेरे मन-प्राणो पर बरसो।

(३)

सुख की घडियों के स्वागत मे
छंदो पर छद सजाता हूँ,
पर अपने दुख के दर्द भरे
गीतो पर कब पछताता हूँ,
जो औरो का आनंद बना
वह दुख मुझपर फिर-फिर आए,
रस में भीगे दुख के ऊपर
मै सुख का स्वर्ग लुटाता हूँ,

कठो से फूट न जो निकले
कवि को क्या उस दुख से, सुख से;

ओ बारिश के बेखुद बादल,
उठ उमड-गरज, घिर घुमड़-चमक
मेरे स्वर-गानों पर बरसो ।

ओ पावस के पहले बादल,
उठ उमड-गरज, घिर घुमड़-चमक
मेरे मन-प्राणों पर बरसो ।

१३

चाँदनी रात के आँगन में
कुछ छिटके-छिटके-से बादल,
कुछ भटका-भटका-सा मन भी ।

(१)

जब सारी दुनिया सोई है
तब नभ-मडल पर चाँद जगा,
कुछ सपनो मे डूबा-डूबा,
कुछ सपनो मे उमगा-उमगा,

उसके पथ मे अनचाहे-से
कुछ बेबस बादल के टुकडे,

पर पूजन, स्नेह-समर्पण से
कब सुदरता को दाग लगा,

जैसे ये बादल के टुकडे
सुखमा का आँचल थामे से,

अनजान किसी पर न्योछावर
क्या शोभन, स्वागतमय होगा
मेरे उर का पागलपन भी ?

चाँदनी रात के आँगन में
कुछ छिटके-छिटके-से बादल,
कुछ भटका-भटका-सा मन भी।

(२)

रह-रहकर यह बादलमाला
अब ठंडी साँसे लेती है,
क्या शीघ्र सफल होने को है
आशाएँ जो यह सेती है?

रगीन मलीन हुईं सहसा;
वे यों ही जगमग कर उठते

करुणा-ममता की छोह भरी
किरणें जिनको छू देती है,

जैसे बिखरापन बादल का
निखरा सतरगा साज पहन;

सध सप्त सुरों मे वीणा के
क्या गीत कभी बन पाएगा
मेरे जीवन का क्रदन भी ?

चॉदनी रात के आँगन मे
कुछ छिटके-छिटके-से बादल,
कुछ भटका-भटका-सा मन भी ।

(३)

झर-झर, लो, वृष्टि लगी होने
अबर के दृग के कोने से,
मन क्यों यों गल-ढल जाता है
अभिलाषा पूरी होने से,

अंतर मे उमडे भावों का
इतना ही तो इतिहास नही,
मोती की फ़सलें उगती है
ऑसू की बूँदें बोने से;

जैसे बादल का विगलित मन
धरती पर गिर वरदान हुआ,

जगती की जलती छाती पर
क्या शीतल रस बन बरसेगा
मेरे नयनो का जल-कण भी ?

चाँदनी रात के आँगन मे
कुछ छिटके-छिटके-से बादल,
कुछ भटका-भटका-सा मन भी ।

१४

तुम आओगी जिस दिन होगी
उस रात हमारी दीवाली।

(१)

दीवाली की खुशियाली मे
जग दीपक-पक्ति जलाता है,
उजियाले मे कुछ ऐसा है
सबकी आँखो को भाता है,

बाहर का तम सहमा-सहमा
आभा की इस रँगरेली से,

मिट्टी के दीपो से पर कब
मन का अँधियाला जाता है,

अबर की तारकमाला भी
कर इसको दूर नही पाई,
धरती की सबसे दिव्य दमक
पर भी रहती छाया काली।

तुम आओगी जिस दिन होगी
उस रात हमारी दीवाली।

(२)

मनुहार विहगम करते हैं
तब सूर्य किरण अँगडाती है,
जब क्षितिज उसाँसे भरता है
तब चद्र किरण मुसकाती है,

जब भीग-नहा चुकता अबर
अपने आँसू की धारा मे,
तब क्षण भर को चपला चंचल
अपना मुखडा दिखलाती है;

मनुहार, उसाँसे, आँसू से
कुछ और न जिसने नाम लिया,
उससे आवाहन करने पर
भी दूर तुम्हारी पग-लाली।

तुम आओगी जिस दिन होगी
उस रात हमारी दीवाली।

(३)

जुगनू की बूँद उजाले की
मिट्टी के कण दीपित करती,
दीपो की अवली जग-जगकर
घर-आँगन का मातम हरती,

बिजली बादल की छाती मे
रखती है ज्वाला की बाती,
रवि-शशि-तारो की प्राण प्रभा
भू मे, नभ मे जीवन भरती,

पर बुझे हुए दिल जलते है
केवल मुसकानो की लौ से,
कुछ आस लगाए स्नेह-भरी
बैठी उर-अतर की प्याली।

तुम आओगी जिस दिन होगी
उस रात हमारी दीवाली।

१५

वह एक दिवस को आई थी
पर कितनी मादक यादों से
भर गई भवन, भर गई हृदय ।

(१)

यह द्वार वही जिसने उसके
आते ही उसके पग चूमे,
ये गलियारे, दे गलबाँही
जिसमे हम हँस-हँसकर घूमे,
इन कमरो की दीवारो के
मुख होता तो वे रच देती
ऐसी कविता जिसको सुनकर
धरती नाचे, अबर झूमे!

उसके बतियाने, गाने के
उसके हँसने के निर्मल स्वर—
से घर प्रतिपल गूँजा करता,
अंतर मे है लहराती लय।

वह एक दिवस को आई थी
पर कितनी मादक यादों से
भर गई भवन, भर गई हृदय।

(२)

जब कल स्वागत कर विहँसा था
तो आज विदा दे रोया भी,
कुछ घड़ियो के अंदर-अदर
मैंने क्या पाया, खोया भी,

अंदाज लगा सकना इसका
मेरे तो बस की बात नही,
अब तक हूँ मै जैसे कोई
कुछ जागा भी, कुछ सोया भी,

कुछ-कुछ सच-सी, कुछ सपने-सी
बीती घटनाएँ लगती है,
लगता जैसे पी बैठा हूँ
कुछ-कुछ मधुमय, कुछ-कुछ विषमय।

वह एक दिवस को आई थी
पर कितने हर्ष-विषादों से
भर गई भवन, भर गई हृदय।

वह एक दिवस को आई थी
पर कितनी मादक यादों से
भर गई भवन, भर गई हृदय।

(३)

विश्वास न था मेरे मन को
आनेवाले अगले पल पर,
वह बोली, किसका 'आज' मधुर,
सबकी आशा, पगले, 'कल' पर,

कल का उसने मेरे आगे
कैसा बढ़िया खाका खींचा,
स्वर्गों से स्वप्न उतरते थे
उसकी बातों पर झलमल कर,

उम्मीदें ऐसी बँधवा दीं
अब मैं बैठा रह सकता हूँ,
उनको सेता तब तक जब तक
लेता है अंतिम साँस समय।

वह एक दिवस को आई थी
पर कितने अद्भुत वादो से
भर गई भवन, भर गई हृदय।

वह एक दिवस को आई थी
पर कितनी मादक यादो से
भर गई भवन, भर गई हृदय।

१६

मन रोक न जो मुझको रखता
जीवन से निर्झर शरमाता ।

(१)

मेरी छाती के भीतर जो
जादू की साँसे चलती है,
उनके छूने से जग-युग की
निश्चल चट्टाने गलती है,

अपनी दो बाँहों के अदर
मै सरिता एक सँभाले हूँ,

मेरे अधरों पर आ-आकर
लहरे दिन-रात मचलती है,

मेरे पथ की बाधा बनकर
कोई कब तक टिक सकता था,
पर मै खुद ऊँचे बाँध उठा
अपने को उनमे भरमाता।

मन रोक न जो मुझको रखता
जीवन, से निर्झर शरमाता।

(२)

रस-रूपमयी इस दुनिया पर
जब मेरी आँखे बिछ जाती,
तब किसकी भौहे तन करके
मेरी पलको को डरपाती,

कलियो की कोमलता छू लूँ,
छू लूँ मधुपो की मादकता,
यह कौन कहाँ से थामे है
जो नही उँगलियाँ बढ पाती,

मधुवन का आज बुलावा है
पावों मे कौन लिपटता है,
इन मृदु पर दृढ जजीरो से
किसने मेरा जोड़ा नाता।

मन रोक न जो मुझको रखता
जीवन से निर्भर शरमाता।

(३)

जब दिल विगलित हो जाता है
तब वह कैसे जम सकता है,
धारा को मोड भले ही दो
पर वेग कहाँ थम सकता है,

भू पर न चला इठलाता तो
किरणो पर नीर चढ़ेगा ही,
पर नभ के सूने आँगन मे
वह कितने दिन रम सकता है,

यह रग-बिरगी जगती ही
मेरे मानस की अधिकारी,
झरना बनकर न बहा इसपर,
बादल बनकर रस बरसाता।

मन रोक न जो मुझको रखता
जीवन से निर्झर शरमाता।

१७

खीचती तुम कौन ऐसे बधनों से
जो कि रुक सकता नही मैं—

(१)

काम ऐसा कौन जिसको
छोड मैं सकता नही हूँ,
कौन ऐसा, मुँह कि जिससे
मोड मैं सकता नही हूँ ?

आज रिश्ता और नाता
जोडने का अर्थ क्या है ?

शृंखला वह कौन जिसको
तोड मैं सकता नही हूँ ?

चाँद, सूरज भी पकड
मुझको नही बिठला सकेंगे,
क्या प्रलोभन दे मुझे वे
एक पल बहला सकेंगे ?

जबकि मेरा वश नहीं
मुझपर रहा, किसका रहेगा ?

खीचती तुम कौन ऐसे बधनों से
जो कि रुक सकता नही मैं—

(२)

उठ रहा है शोर-गुल
जग में, जमाने मे, सही है,
किंतु मुझको तो सुनाई
आज कुछ देता नही है,

कोकिलो, तुमको नई ऋतु
के नए नगमे मुबारक,

और ही आवाज मेरे
वास्ते अब आ रही है,

स्वर्ग परियो के स्वरों के
भी लिए मैं आज बहरा,
गीत मेरा मौन सागर
मे गया है डूब गहरा,

साँस भी थम जाय जिससे
साफ तुमको सुन सकूँ मैं—

खीचती किन पीर-भीगे गायनों से
जो कि रुक सकता नही मैं—

खीचती तुम कौन ऐसे बंधनो से
जो कि रुक सकता नही मै—

(३)

है समय किसको कि सोचे
बात वादो की, प्रणो की,
मान के, अपमान के,
अभिमान के बीते क्षणो की,
फूल यश के, शूल अपयश
के बिछा दो रास्ते मे,
घाव का भय, चाह किसको
पखुरी के चुबनों की,

मै बुझाता हूँ पगो से
आज अतर के अँगारे,
और वे सपने कि जिनको
कवि करो ने थे सँवारे,

आज उनकी लाश पर मै
पॉव धरता आ रहा हूँ—

खीचती किन मौन दृग के जलकणो से
जो कि रुक सकता नही मै—

खीचती तुम कौन ऐसे बधनो से
जो कि रुक सकता नही मै—

१८

(१)

तुमको मेरे प्रिय प्राण निमंत्रण देते ।

अतस्तल के भाव बदलते
कठस्थल के स्वर में,
लो, मेरी वाणी उठती है
धरती से अबर मे,

अर्थ और आखर के बल का
कुछ मै भी अधिकारी,
तुमको मेरे मधुगान निमत्रण देते ;
तुमको मेरे प्रिय प्राण निमत्रण देते ।

(२)

अब मुझको मालूम हुई है
शब्दो की भी सीमा,
गीत हुआ जाता है मेरे
रुद्ध गले मे धीमा,

आज उदार दृगो ने रख ली
लाज हृदय की जाती,
तुमको नयनो के दान निमत्रण देते;
तुमको मेरे प्रिय प्राण निमत्रण देते।

(३)

आँख सुने तो आँख भरे दिल
के सौ भेद बताए,
दूर बसे प्रियतम को आँसू
क्या सदेश सुनाए,

भिगा सकोगी इनसे अपने
मन का कोई कोना ?
तुमको मेरे अरमान निमत्रण देते ;
तुमको मेरे प्रिय प्राण निमत्रण देते।

(४)

कवियों की सूची से अब से
मेरा नाम हटा दो,
मेरी कृतियों के पृष्ठो को
मरुथल मे बिखरा दो,

मौन बिछी है पथ मे मेरी
सत्ता, बस तुम आओ,
तुमको कवि के बलिदान निमत्रण देते;
तुमको मेरे प्रिय प्राण निमत्रण देते ।

१६

प्राण, सध्या झुक गई गिरि, ग्राम, तरु पर,
उठ रहा है क्षितिज के ऊपर सिदूरी चाँद
मेरा प्यार पहली बार लो तुम ।

(१)

सूर्य जब ढलने लगा था कह गया था,
मानवो, खुश हो कि दिन अब जा रहा है,
जा रही है स्वेद, श्रम की क्रूर घडियाँ,
औ' समय सुदर, सुहाना आ रहा है,

छा गई है शाति खेतो मे, वनों मे
पर प्रकृति के वक्ष की धडकन बना-सा,

दूर, अनजानी जगह पर एक पछी
मद लेकिन मस्त स्वर से गा रहा है,

औ' धरा की पीन पलको पर विनिद्रित
एक सपने-सा मिलन का क्षण हमारा,
स्नेह के कधे प्रतीक्षा कर रहे है;
झुक न जाओ और देखो उस तरफ भी—

प्राण, सध्या झुक गई गिरि, ग्राम, तरु पर,
उठ रहा है क्षितिज के ऊपर सिदूरी चाँद,
मेरा प्यार पहली बार लो तुम।

(२)

इस समय हिलती नही है एक डाली,
इस समय हिलता नही है एक पत्ता,
यदि प्रणय जागा न होता इस निशा मे
सुप्त होती विश्व की सपूर्ण सत्ता,

वह मरण की नीद होती जड-भयकर
और उसका टूटना होता असभव,
प्यार से ससार सोकर जागता है,
इसलिए है प्यार की जग मे महत्ता,

हम किसी के हाथ मे साधन बने है
सृष्टि की कुछ माँग पूरी हो रही है,
हम नही अपराध कोई कर रहे है,
मत लजाओ और देखो उस तरफ भी—

प्राण, रजनी भिच गई नभ के भुजो मे,
थम गया है शीश पर निरुपम रुपहरा चाँद,
मेरा प्यार बारबार लो तुम ।

प्राण, सध्या झुक गई गिरि, ग्राम, तरु पर,
उठ रहा है क्षितिज के ऊपर सिदूरी चॉद,
मेरा प्यार पहली बार लो तुम।

(३)

पूर्व से पच्छिम तलक फैले गगन के
मन-फलक पर अनगिनत अपने करो से
चॉद सारी रात लिखने मे लगा था
'प्रेम' जिसके सिर्फ ढाई अक्षरो से

हो अलक्कृत आज नभ कुछ दूसरा ही
लग रहा है और लो जग-जग विहग दल
पढ इसे, जैसे नया यह मत्र कोई,
हर्ष करते व्यक्त पुलकित पर, स्वरों से,

किंतु तृण-तृण ओस छन-छन कह रही है,
आ गई वेला विदा के ऑसुओ की,
यह विचित्र विडबना पर कौन चारा,
हो न कातर और देखो उस तरफ भी—

प्राण, राका उड गई प्रात पवन मे,
ढल रहा है क्षितिज के नीचे शिथिल-तन चॉद,
मेरा प्यार अतिम बार लो तुम ।

प्राण, सध्या झुक गई गिरि, ग्राम, तरु पर,
उठ रहा है क्षितिज के ऊपर सिदूरी चॉद,
मेरा प्यार पहली बार लो तुम ।

२०

(१)

क्या मेरा है जो आज तुम्हे दे डालूँ।

मिट्टी की अजलि मे मैंने
जोडा स्नेह तुम्हारा,
बाती की थाती दे तुमने
मेरा भाग्य सँवारा,

करूँ आरती तो भी जलते
है वरदान तुम्हारे,
अपने प्राणो के दीप कहाँ जो बालूँ;
क्या मेरा है जो आज तुम्हे दे डालूँ।

(२)

तुमने निज अधरो से मेरी
तृष्णा के दृग खोले,
प्यास जगे, फिर जीवन चाहे
मधु, चाहे विष घोले,

भरी हृदय के रस से तुमने
मेरी खाली प्याली,
फिर उसे तुम्हारे प्याले मे क्या ढालूँ;
क्या मेरा है जो आज तुम्हे दे डालूँ।

(३)

मैंने फिर हीरे मोती-सी
आँसू की निधि पाली,
पर मरुथल के वक्षस्थल से
किसने धार निकाली,

खारे जल का अर्घ्य चढाकर
कौन बने अपराधी,
आँसू से अपने नयनो को नहलालूँ;
क्या मेरा है जो आज तुम्हे दे डालूँ।

(४)

छंदों मे जो लय लहराती
वह पदचाप तुम्हारी,
पायल की रुनझुन पर मेरा
राग मुखर बलिहारी,

शब्दों में जो भाव मचलते
उनपर क्या वश मेरा,
अपने को ही बहलाना है तो गा लूँ;
क्या मेरा है जो आज तुम्हें दे डालूँ।

२१

मौन यामिनी मुखरित मेरी
मधुर तुम्हारी पग पायल से ।

(१)

अबर के कोने-कोने मे
तारो का सगीत समाए,
प्रलय घनो के गुरु गर्जन से
नभ का ओर-छोर हिल जाए,

तडित लास से, अट्टहास से
दसो दिशाएँ फिर-फिर काँपें,

प्रबल प्रभजन का रव सनसन
वसुधा के कण-कण मे छाए,

किंतु सकेगी भेद प्रकृति भी
कैसे अतर का सूनापन,
कैसे हो सकता मन मेरा
विचलित जग के कोलाहल से।

मौन यामिनी मुखरित मेरी
मधुर तुम्हारी पग पायल से।

(२)

मेरे उच्छ्वासो से जाने
मधुऋतु ने कब धोखा खाया,
तरुओ मे कब अकुर फूटे
कोयल ने कब गीत सुनाया,

मेरे अध तमस मे जाने
कब किरणे भूले से आई,

प्रात पवन ने कब सहलाकर
मेरा सोया स्वप्न जगाया,

अमर अभावो के आँगन मे
जाने कब आशाएँ नाची,
जाने कब धुल गए नियति के
अक अमिट नयनो के जल से।

मौन यामिनी मुखरित मेरी
मधुर तुम्हारी पग पायल से।

(३)

इस पायल की लय मे मेरी
श्वासों ने निज लय पहचानी,
इस पायल की ध्वनि में मेरे
प्राणो ने अपनी ध्वनि जानी।

ताल दे रहा रोम-रोम है
तन का उसकी रुनुक-भुनुक पर,

इस अधीर मजीर मुखर से
आज बाँध लो मेरी वाणी,

जीवन की यात्रा के सबसे
सच्चे साथी गीत रहे है,
मुझे खोजना है जग का मग
इन पग रागो के सबल से।

मौन यामिनी मुखरित मेरी
मधुर तुम्हारी पग पायल से।

२२

(१)

मधु पी लो, मौसम आज बडा प्यारा हे ।

अठखेली करती चलती है
आज हवा मदमाती,
पत्ती-पत्ती गीत प्रीति का
झूम-झूमकर गाती,

उभर-उभर उठती सुख साँसों
से पृथिवी की छाती,
मधु पी लो, मौसम आज बड़ा प्यारा है ।

(२)

उडे कहाँ जाते है नभ मे
ये बादल के टुकडे,
काश मूँद सकते ये जाकर
उन गुनियो के मुखडे,

अधकार मे भी जिनके दृग
दोष हमारा तकते,
लेकिन ऐसो से यौवन कब हारा है ;
मधु पी लो, मौसम आज बडा प्यारा है ।

(३)

किसे सुनाई दे सकती है
उनकी निदित वाणी,
आज प्यास का स्वर ऊँचा है
सुन लो, सुमुखि, सयानी,

आज स्वाति की बूँद खोजता
है कोई मतवाला,
शशि लाख बहाता अमृत की धारा है ;
मधु पी लो, मौसम आज बड़ा प्यारा है ।

(४)

आज चद्रिका की मदिरा मे
डूबे अनगिन तारे,
हमी किनारे पर क्यो बैठे,
चलो चले मँझधारे,

आज सतह पर रह जाने से
लाज नही बच सकती,
जीवन की तह ने हमको ललकारा है;
मधु पी लो, मौसम आज बडा प्यारा है ।

२३

(१)

सखि, अखिल प्रकृति की प्यास कि हम-तुम भीगे।

अकस्मात यह बात हुई क्यों
जब हम-तुम मिल पाए,
तभी उठी आँधी अबर मे
सजल जलद घिर आए,

यह रिमझिम सकेत गगन का
समझो या मत समझो,
सखि, भीग रहा आकाश कि हम-तुम भीगे;
सखि, अखिल प्रकृति की प्यास कि हम-तुम भीगे।

(२)

इन ठंडे-ठडे झोको से
मैं कॉपा, तुम कॉपी,
एक भावना बिजली बनकर
दो हृदयो मे व्यापी,

आज उपेक्षित हो न सकेगा
रसमय पवन-सँदेसा,
सखि, भीग रही बातास कि हम-तुम भीगे ;
सखि, अखिल प्रकृति की प्यास कि हम-तुम भीगे ।

(३)

मधुवन के तरुवर से मिलकर
भीगी लतर सलोनी,
साथ कुसुम के कलिका भीगी,
कौन हुई अनहोनी,

भीग-भीग पी-पीकर चातक
का स्वर कातर भारी,
सखि, भीग रही है रात कि हम-तुम भीगे ;
सखि, अखिल प्रकृति की प्यास कि हम-तुम भीगे ।

(४)

इस दूरी की मजबूरी पर
आँसू नयन गिराते,
आज समय तो था अधरो से
हम मधुरस बरसाते,

मेरी गीली साँस तुम्हारी
साँसों को छू आती,
सखि, भीग रहे उच्छ्वास कि हम-तुम भीगें,
सखि, अखिल प्रकृति की प्यास कि हम-तुम भीगे।

२४

बद्ध तुम्हारे भुजपाशो मे,
और कहो क्या बधन मानूँ ।

(१)

यह घन कुतल राशि नही है
पर्दा है जग की ऑखों पर,

अधरों पर मधु विदु नही है
आया रस का सिधु सिमट कर,

श्वास नही, प्रश्वास नही है
मलयानिल के भावुक झोके,

पुलकित रोमो मे सुख मुखरित
तन की मिट्टी का मादक स्वर,

नयनो की यह जोत नही है,
यह है स्वर्गो का आमत्रण,
लुब्ध, मुग्ध, लवलीन तुम्ही मे
अब किसका आकर्षण मानूँ,

बद्ध तुम्हारे भुजपाशो मे,
और कहो क्या बधन मानूँ।

(२)

काल कृपाण उठाता जिसपर,
दान अभय का उसको देता,
मैं स्वरूप के भाग्य पटल पर
लिख देता, 'अमरत्व विजेता',

एक-एक क्षण को कर देता
हूँ मैं युग-युग का प्रतिद्वंदी,

अटल बनाता मैं यौवन को
जो केवल पल का अभिनेता,

तृषा-तृप्ति हो साथ जहाँ पर
ऐसा जग रचता रहता हूँ,
यह संघर्ष नहीं है तो फिर
और किसे संघर्षण मानूँ;

बद्ध तुम्हारे भुजपाशों में,
और कहो क्या बंधन मानूँ

(३)

बनकर आग नही पैठा जो
कब उसको स्वीकार किया है,
बनकर राग नही निकला जो
कब उसका इजहार किया है,

स्थान दिया कब उसको मैंने
मथ न दिया जिसने मन मेरा,

प्राण न बाजी पर हों जिसमे
कब ऐसा व्यापार किया है,

बिज्जु-वितान, प्रचड बवडर
मेरे मन के मीत पुराने,
जग पगडंडी पर के कैसे
दड, नियम, अनुशासन मानूँ,

बद्ध तुम्हारे भुजपाशो मे,
और कहो क्या बधन मानूँ।

(१)

सखि, यह रागो की रात नही सोने की।

अबर-अतर गल धरती का
अचल आज भिगोता,
प्यार पपीहे का पुलकित स्वर
दिशि-दिशि मुखरित होता,

और प्रकृति-पल्लव-अवगुठन
फिर-फिर पवन उठाता,
यह मदमातों की रात नही सोने की;
सखि, यह रागो की रात नही सोने की।

(२)

है अनगिन अरमान मिलन की
ले दे के दो घडियाँ,
भूल रही पलको पर कितने
सुख सपनो की लडियाँ,

एक-एक पल मे भरना है
युग-युग की चाहो को,
सखि, यह साधो की रात नही सोने की ;
सखि, यह रागो की रात नही सोने की ।

(३)

बाट जोहते इस रजनी की
वज्र कठिन दिन बीते,
किंतु अंत मे दुनिया हारी
और हमी तुम जीते,

नर्म नीद के आगे अब क्यो
आँखे पाँख झुकाएँ,
सखि, यह रातो की रात नही सोने की ;
सखि, यह रागो की रात नही सोने की ।

(४)

वही समय जिसकी दो जीवन
करते थे प्रत्याशा,
वही समय जिसपर अटकी थी
यौवन की सब आशा,

इस वेला मे क्या-क्या करने
को हम सोच रहे थे,
सखि, यह वादो की रात नही सोने की ;
सखि, यह रागो की रात नही सोने की ।

२६

(१)

प्रिय, शेष बहुत है रात अभी मत जाओ ।

अरमानो की एक निशा मे
होती है कै घडियाँ,
आग दबा रक्खी है मैने
जो छूटी, फुलझडियाँ,

मेरी सीमित भाग्य परिधि को
और करो मत छोटी,
प्रिय, शेष बहुत है रात अभी मत जाओ ।

(२)

अधर पुटो मे बद अभी तक
थी अधरो की वाणी,
'हॉ-ना' से मुखरित हो पाई
किसकी प्रणय कहानी,

सिर्फ भूमिका थी जो कुछ
सकोच-भरे पल बोले,
प्रिय, शेष बहुत है बात अभी मत जाओ ,
प्रिय, शेष बहुत है रात अभी मत जाओ ।

(३)

शिथिल पडी है नभ की बाहो
में रजनी की काया,
चॉद चॉदनी की मदिरा मे
है डूबा, भरमाया,

अलि अब तक भूले-भूले-से
रस-भीनी गलियो मे,
प्रिय, मौन खड़े जलजात अभी मत जाओ,
प्रिय, शेष बहुत है रात अभी मत जाओ ।

(४)

रात बुझाएगी सच-सपने
की अनबूझ पहेली,
किसी तरह दिन बहलाता है
सब के प्राण, सहेली,

तारों के झँपने तक अपने
मन को दृढ़ कर लूँगा,
प्रिय, दूर बहुत है प्रात अभी मत जाओ;
प्रिय, शेष बहुत है रात अभी मत जाओ।

२७

चाँद चमकता, वायु ठुमकती,
छन-छन हिलती तरु की छाया ।

(१)

मैने क्राति निशान उठाया,
काम नया यह मैंने जाना,
किंतु उसीकी तैयारी मे
बरसो से था व्यस्त जमाना,

मैंने कुछ सीमाएँ तोडीं,
सोचा, नूतन राह निकाली,

चाह रहा था लेकिन युग ही
उसपर अपने पॉव बढाना;

ये दो चुबन काल-नदी में
बहनेवाले फूल नही है;
निज गति के मगरूर समय से
क्षण भर मैंने आज चुराया।

चाँद चमकता, वायु ठुमकती,
छन-छन हिलती तरु की छाया।

(२)

एक गीत लिखकरके मैंने
जीवन का सदेश सुनाया,
हुआ मुझे भ्रम, जहाँ रुदन था
गायन बनकर मै मुसकाया,

शत-शत कठों से वह गूँजा,
मैं समझा, मेरी प्रतिध्वनियाँ,

पर वे आशा की घड़ियाँ थी,
सबने ही उनका गुण गाया;

यह मुसकान तरंग-विनिर्मित
बालू पर की रेख नही है;
सबपर व्यापे शूर समय से
क्षण भर मैंने आज चुराया।

चाँद चमकता, वायु ठुमकती,
छन-छन हिलती तरु की छाया।

(३)

सालो श्रम कर, रातो जगकर
मैने एक विचार निकाला,
पर सब जग यो सोच रहा था,
पा न सका कुछ मर्म निराला,

ज्ञान-कणो को स्वेद-कणो से
सिचित करके मूर्ति बनाई,

किंतु गली वह, ले दुनिया ने
ज्योही निज धारा मे डाला;

यह दो आँसू काल जलधि में
खोनेवाले बिंदु नही हैं;
चिर विध्वसक क्रूर समय से
क्षण भर मैंने आज चुराया ।

चाँद चमकता, वायु ठुमकती,
छन-छन हिलती तरु की छाया ।

२८

कहाँ, विमोहिनि, ले जाओगी
रिझा मुझे झङ्कृत पायल से ?

(१)

वहाँ ? जहाँ बौरी अमराई
मे फैली है सुरभित छाया,
जहाँ जगत की धूप-धूलि से
दूर पिकी ने नीड बनाया,

जहाँ भृंग का गुजन करत
व्यग विश्व के कोलाहल पर

झूम-झूमकर मद अनिल ने
गीत जहाँ मस्ती का गाया,

दाग-पराग लगाकर तितली
जहाँ नही लज्जित होती है,
जहाँ पहुँचकर तन पुलकित, मन
हो उठते मधु स्नात, शिथिल-से;

कहाँ, विमोहिनि, ले जाओगी
रिझा मुझे झंकृत पायल से

(२)

वहाँ ? जहाँ कवि के मानस का
मधुर स्वप्न साकार हुआ है,
जहाँ जवानी अजर हुई है
अमर जहाँपर प्यार हुआ है,

जहाँ समय के आघातो पर
सुदरता हँसती रहती है,

वहाँ ? जहाँपर स्वर्ग धरा के
वैभव पर बलिहार हुआ है,

जहाँ कल्पना लेती रहती
होड गणित की सच्चाई से,
जहाँ पहुँचकर खुलता नाता
मानव का ;दवो के दल से;

कहाँ, विमोहिनि, ले जाओगी
रिझा मुझे झकृत पायल से !

(३)

वहाँ ? जहाँ मिट्टी के पुतलो
के पथ मे चट्टानें पडी हैं,
लेकर प्रश्न • मरण-जीवन का
क़दम-क़दम पर नियति खडी है,

जहाँ पराजय ही अंकित है
मानव के सब संघर्षों पर,

जहाँ विफलता के क्रंदन से
घबराई प्रत्येक घडी है,

जहाँ उदर मानव का उसका
हृदय निगलने को तत्पर है,
जहाँ विश्व इतिहास लिखा है
खून-पसीने से, दृगजल से,

कहाँ, विमोहिनि, ले जाओगी
रिझा मुझे झंकृत पायल से ?

२९

अस्त हुआ दिन, मस्त समीरण,
मुक्त गगन के नीचे हम-तुम ।

(१)

संध्या की श्यामल अलकों ने
घेर लिया अबर का आनन,
अवनी की अलसित पलको पर
तंद्रा तिरती आती क्षण-क्षण

बद हुए जग-नयन जिन्होंने
पर दूषण, पर दोष निहारा,

मौन हुई जग-जिह्वा करके
झूठा - सच्चा निदन - वदन,

आजादी की एक साँस से
सुरभित हुई प्रणय की वेला;
अब निर्भय, नि शक, निराकुल
मुग्ध गगन के नीचे हम-तुम ।

अस्त हुआ दिन, मस्त समीरण,
मुक्त गगन के नीचे हम-तुम ।

(२)

पिछले पहर दबे पावों से
आती है चाँदनी सहमती,
हवा लदी फूलो की बू से
चलती है पग-पग पर थमती,

आसमान पर पहरा देते
ऊँघ रही तारों की आँखे,

औ' धरती के कण-कण मे है
मीठी-मीठी नीद विलमती,

यही घडी है मन के ऊपर
जब कोई प्रतिबध नही है;
अब अपने सपनों से लिपटे
मुक्त गगन के नीचे हम-तुम।

अस्त हुआ दिन, मस्त समीरण,
मुक्त गगन के नीचे हम-तुम।

(३)

आकाशी कुसुमो-कलियो को
रवि किरणो की धार बहाती,
और उसीमे रजनी अपने
मन की छाया-मूर्ति सिराती,

बदला अजिर कलित क्रीडा का
श्रम - सघर्षण - समरागण मे,

हाहाकार, कलह, क्रदन की
तुमुल प्रतिध्वनि बढती जाती,

व्यक्ति विलीन दलो के दुर्मद
जद्दोजहद मे, रद्दोबदल मे,
अब दुनिया के कोलाहल मे
लुप्त गगन के नीचे हम-तुम ।

अस्त हुआ दिन, मस्त समीरण,
मुक्त गगन के नीचे हम-तुम ।

३०

सुधि मे सचित वह साँझ कि जब
रतनारी प्यारी सारी मे, तुम, प्राण, मिली नत, लाज-भरी
मधुऋतु-मुकुलित गुलमुहर तले ।

(१)

सिंदूर लुटाया था रवि ने,
संध्या ने स्वर्ण लुटाया था,
थे गाल गगन के लाल हुए,
धरती का दिल भर आया था,

लहराया था भरमाया-सा
डाली-डाली पर गंध पवन,

जब मैंने तुमको औ' तुमने
मुझको अनजाने पाया था,

है धन्य धरा जिसपर मन का
धन धोखे से मिल जाता है:
पल अचरज और अनिश्चय के
पलकों पर आते ही पिघले,

पर सुधि में संचित साँझ कि जब
रतनारी प्यारी सारी में, तुम, प्राण, मिली नत, लाज-भरी
मधुऋतु-मुकुलित गुलमुहर तले।

(२)

साय-प्रातः का कचन क्या
यदि अधरो का अंगार मिले,
तारक मणियो की सपति क्या
यदि बाँहो का गलहार मिले,

ससार मिले भी तो क्या जब
अपना अतर ही सूना हो,
पाना क्या शेष रहे फिर जब
मन को मन का उपहार मिले,

है धन्य प्रणय जिसको पाकर
मानव स्वर्गो को ठुकराता,
ऐसे पागलपन के अवसर
कब जीवन मे दो बार मिले,

है याद मुझे वह शाम कि जब
नीलम-सी नीली सारी मे, तुम, प्राण, मिली उन्माद-भरी
खुलकर फूले गुलमुहर तले ।

सुधि मे संचित वह साँझ कि जब
रतनारी, प्यारी सारी मे, तुम, प्राण, मिली नत, लाज-भरी
मधुऋतु-मुकुलित गुलमुहर तले।

(३)

आभास विरह का आया था
मुझको मिलने की घड़ियो मे,
आहो की आहट आई थी
मुझको हँसती फुलझड़ियो मे,

मानव के सुख मे दुख ऐसे
चुपचाप उतरकर आ जाता,
है ओस ढुलक पड़ती जैसे
मकरंदमयी पंखुरियो मे

है धन्य समय जिससे सपना
सच होता, सच सपना होता;
अंकित सबके अंतरपट पर
कुछ बीती बाते, दिन पिछले;

कब भूल सका गोधूलि कि जब
सित-सेमल सादी सारी में, तुम, प्राण, मिली अवसाद-भरी
कलि-पुहुप झरे गुलमुहर तले ।

सुधि में सञ्चित वह साँझ कि जब
रतनारी प्यारी सारी में, तुम, प्राण, मिलीं नत, लाज-भरी
मधुऋतु-मुकुलित गुलमुहर तले ।

३१

तन त्रस्त कही, मन मस्त वही,
जिस ठौर लहरियाँ रागो की रस के मानस की गोदी मे
चिर सुखमा का सावन गाती ।

(१)

यह सच है सबने देखा है
मुझको जग के कोलाहल मे,
जिस जगह कि थिर अस्थिर होता,
अस्थिर थिर होता पल-पल मे,

जिस जगह नही कुछ भी पाता
अपना सगी, अपना साथी,

हर एक लगा है, लिपटा है
अपनी धुन, अपनी हलचल मे,

इस शोर-शरर के भीतर भी
मै गीत कहॉ से पाता हूँ,
जो शाति बसी-बरसी मुझमे
वह जान कहॉ दुनिया पाती,

तन त्रस्त कही, मन मस्त वही,
जिस ठौर लहरियॉ रागो की रस के मानस की गोदी में
चिर सुखमा का सावन गाती ।

(२)

यह सच है सबने देखा है
मुझको मरु मे आते-जाते,
तावे-सी जलती बालू पर
तलवो को अपने झुलसाते,

अधा करनेवाले अधड
मे पथ अपना निश्चय करते,

चिनगारी-सी रेतों वाली
झझा के झड-झोके खाते,

इन दाह भरे अभिशापो में
मै प्रीति कहाँ से पाता हूँ,
मुझमे वरदान छलकते जो
वह देख कहाँ दुनिया पाती,

तन त्रस्त कही, मन मस्त वही,
जिस ठौर तरगे रागो की रस की सरिता से उठ-उठकर
प्यासे कूलो को नहलाती।

तन त्रस्त कही, मन मस्त वही
जिस ठौर लहरियाँ रागो की रस के मानस की गोदी मे
चिर सुखमा का सावन गाती ।

(३)

यह सच है सबने देखा है
मुझको बेडी-हथकडियो मे,
जिनपर चलता कुछ जोर नही
ऐसी लोहे की लडियो मे,

कुछ जजीरे जो लगती थी
ऊपर से सुरभित गजरो-सी,
ली डाल गले अपने मैने
खुद बेहोशी की घडियो मे,

इतने बधन मे घिर-घुटकर
किसकी सत्ता जीती, जगती,
नि शक निरकुशता मेरी
पहचान कहाँ दुनिया पाती,

तन त्रस्त कहीं, मन मस्त वहीं,
जिस ठौर कि मौजें रागों की रस के सागर से झूल-झपट
जीवन के तट पर टकराती ।

तन त्रस्त कहीं, मन मस्त वहीं,
जिस ठौर लहरियाँ रागों की रस के मानस की गोदी में
चिर सुखमा का सावन गाती ।

३२

मै गाता हूँ;
मै गाता हूँ इसलिए जवानी मेरी है।

(१)

वे दुर्गम पथ का श्रम-सकट भी क्या जाने
जो उसपर पॉव बढाते, गाते जाते है,
जिनके कठों मे गीत नही धीमे पडते
वे फूल सदृश पर्वत का बोझ उठाते है,

मैने दुख-सुख हर हालत मे गाना जाना,
मुझको जीवन का भार सदा श्रृगार हुआ,

वह कुचला करता है उनको ही रागो मे
अपने अनुभव को बॉध नही जो पाते है,

यौवन जिसका है तान वही भर सकता है
लेकिन मै तो कुछ उलटी कर दिखलाता हूँ-

मै गाता हूँ इसलिए जवानी मेरी है।
मै गाता हूँ;
मै गाता हूँ इसलिए जवानी मेरी है।

(२)

तुम मेरे पथ के बीच लिए काया भारी-
भरकम क्यो जमकर बैठ गए कुछ बोलो तो,
क्यो तुमको छूता है मेरा सगीत नही,
तुम बोल नही सकते तो झूमो, डोलो तो,

रागो की रोकी जा सकती है राह नही,
रोडो, हठधर्मी छोडो, मुझसे मन जोडो,

तुमसे भी मधुमय शब्द निकलकर गूँजेगे,
तुम साथ जरा मेरी धारा के हो लो तो,

तुमने मुँह बाँधा, इससे ही तो पाँव बँधे,
मै कठ खुला ले आगे बढता जाता हूँ—

मै गाता हूँ, इसलिए रवानी मेरी है ।
मै गाता हूँ;
मै गाता हूँ इसलिए जवानी मेरी है ।

(३)

कलियाँ मधुवन मे गध-गमक मुसकाती है,
मुझपर जैसे जादू-सा छाया जाता है,
मैं तो केवल इतना ही सिखला सकता हूँ,
अपने मन को किस भाँति लुटाया जाता है,

लिखने दो अपनी दुर्बलता का गीत मुझे,
मै जग के तर्ज-अमल से हूँ अनभिज्ञ नही,

दुनिया अक्सर मेरे कानो मे कहती है,
इस कमजोरी को, मूढ, छिपाया जाता है,

मै किससे भेद छिपाऊँ, सबतो अपने है,
अपनी बीती मे जगबीती मै पाता हूँ——

मै गाता हूँ, यह प्रेम कहानी मेरी है ।
मै गाता हूँ,
मै गाता हूँ इसलिए जवानी मेरी है ।

(४)

तुम पा न सकोगे मुझे विश्वविद्यालय मे,
लेक्चर देनेवाले मुझसे बहुतेरे है,
पहचानोगे क्या खाकी वर्दी वालो मे,
हर एक जगह पर इनके डीपो-डेरे है,

मै कलम और बदूक चलाता हूँ दोनों,
दुनिया मे ऐसे बदे कम पाए जाते,
दावा न करूँगा ऐसो मे यकताई का,
यद्यपि इनपर अधिकार स्वय कुछ मेरे है;

औरो ने जो की भूल न तुम भी कर बैठो,
इसलिए तुम्हे यह पहले से बतलाता हूँ——

मै गाता हूँ, यह खास निशानी मेरी है।
मै गाता हूँ,
मै गाता हूँ इसलिए जवानी मेरी है।

३३

जीवन की आपाधापी मे कब वक्त मिला
कुछ देर कही पर बैठ कभी यह सोच सकूँ,
जो किया, कहा, माना उसमे क्या बुरा-भला ।

(१)

जिस दिन मेरी चेतना जगी मैने देखा
मै खडा हुआ हूँ इस दुनिया के मेले मे,
हर एक यहॉपर एक भुलावे मे भूला,
हर एक लगा है अपनी-अपनी दे-ले मे,

कुछ देर रहा हक्का-बक्का, भौचक्का-सा—
आ गया कहॉ, क्या करूँ यहॉ , जाऊँ किस जा ?

फिर एक तरफ से आया ही तो धक्का-सा,
मैने भी बहना शुरू किया उस रेले मे,

क्या बाहर की ठेला-पेली ही कुछ कम थी,
जो भीतर भी भावो का ऊहापोह मचा,
जो किया, उसी को करने की मजबूरी थी,
जो कहा, वही मन के अदर से उबल चला,

जीवन की आपाधापी मे कब वक्त मिला
कुछ देर कही पर बैठ कभी यह सोच सकूँ,
जो किया, कहा, माना उसमे क्या बुरा-भला

(२)

मेला जितना भडकीला रग-रँगीला था,
मानस के अदर उतनी ही कमजोरी थी,
जितना ज्यादा सचित करने की ख्वाहिश थी,
उतनी ही छोटी अपने कर की झोरी थी,

जितनी ही बिरमे रहने की थी अभिलाषा,
उतना ही रेले तेज ढकेले जाते थे,
क्रय-विक्रय तो ठडे दिल से हो सकता है,
यह तो भागा-भागी की छीना-छोरी थी,

अब मुझसे पूछा जाता है क्या वतलाऊँ,
क्या भान अकिचन बिखराता पथ पर आया,
वह कौन रतन अनमोल मिला ऐसा मुझको,
जिसपर अपना मन-प्राण निछावर कर आया,

यह थी तकदीरी बात मुझे गुण दोष न दो,
जिसको समझा था सोना, वह मिट्टी निकली,
जिसको समझा था आँसू, वह मोती निकला।

जीवन की आपाधापी मे कब वक़्त मिला
कुछ देर कही पर बैठ कभी यह सोच सकूँ,
जो किया, कहा, माना उसमे क्या बुरा-भला।

(३)

मै कितना ही भूलूँ, भटकूँ या भरमाऊँ,
है एक कही मजिल जो मुझे बुलाती है,
कितने ही मेरे पाँव पडे ऊँचे-नीचे,
प्रतिपल वह मेरे पास चली ही आती है,

मुझपर विधि का आभार बहुत-सी बातो का
पर मै कृतज्ञ उसका इसपर सबसे ज्यादा—
नभ ओले बरसाए, धरती शोले उगले,
अनवरत समय की चक्की चलती जाती है,

मै जहाँ खडा था कल उस थल पर आज नही,
कल इसी जगह फिर पाना मुझको मुश्किल है;
ले मापदड जिसको परिवर्तित कर देती
केवल छूकर ही देश-काल की सीमाएँ

जग दे मुझपर फैसला उसे जैसा भाए
लेकिन मै तो बेरोक सफर मे जीवन के
इस एक और पहलू से होकर निकल चला।

जीवन की आपाधापी मे कब वक्त मिला
कुछ देर कही पर बैठ कभी यह सोच सकूँ,
जो किया, कहा, माना उसमे क्या बुरा-भला।

१

कुदिन लगा, सरोजिनी सजा न सर,
सुदिन भगा, न कंज पर ठहर भ्रमर,
अनय जगा, न रस विमुग्ध कर अधर,
—सदैव स्नेह
के लिए
विकल हृदय !

कटक चला, निकुंज में हवा न चल,
नगर हिला, न फूल-फूल पर मचल,
गदर हुआ, सुरभि समीर से न रल,
—सदैव मस्त
चाल से
चला प्रणय !

समर छिड़ा, न आज बोल, कोकिला,
कहत पड़ा, न कंठ खोल, कोकिला,
प्रलय खड़ा, न कर ठठोल कोकिला,
—सदैव प्रीति-
गीत के
लिए समय !

२

सुवर्ण मेघ युक्त पच्छिमी गगन,
विषाद से विमुक्त पच्छिमी गगन,
प्रसाद से प्रबुद्ध पच्छिमी हवा,
धरा सजग
अतीत को
बिसार फिर!

न ग्रीष्म के उसाँस का पता कहीं,
न अश्रुसिक्त वृक्ष औ' लता कहीं,
न प्राणहीन हो कहीं थमी हवा,
निशा रही
स्वरूप को
सँवार फिर!

मयंक-रश्मि पूर्व से लहक रही,
असुप्त नीड-वासिनी चहक रही,
शरद प्रफुल्ल मल्लिका महक रही,
दहक रहा
बुझा हुआ
अँगार फिर!

३

निशा, मगर बिना निशा सिगार के,
नखत थकित अचद्र नभ निहार के,
    क्षितिज-परिधि निराश, कालिमामयी,
        परतु
            आसमान
                इतजार में !

घडी हरेक वर्ष-सी बडी हुई,
निशा पहाड की तरह खडी हुई,
    नछत्र-माल चाल भूल-सी गई,
        परतु
            कब थकान
                इतजार में !

प्रभात-भाल-चंद्र पूर्व मे उगा,
प्रभात-बालचंद्र पूर्व मे उगा,
प्रभात-लालचद्र पूर्व में उगा,
        परतु
            सुख महान
                इतजार में !

४

दिवस गया विवश थका हुआ शिथिल,
तिमिरमयी हुई बसुधरा निखिल,
जमीन-आसमान मे दिए जले,
मगर जगत
हुआ नही
प्रकाशमय

सभी तरफ विभा बिखर गई तरुण,
कलित-ललित हुआ, सभी कलुष-करुण,
किसी समय बुझे हुए हिए जले,
किन्ही नयन
प्रदीप मे
जगा प्रणय !

चढा मुँडेर मुर्ग सिर उठा रहा,
पुकार बारबार यह बता रहा,
सुभग, सजग, सजीव प्रात आ रहा,
नई नज़र,
नई लहर,
नया समय !

५

शिशिर समीर वन झकोर कर गया,
सिगार वृक्ष-वेलि का किधर गया,
जमीन पीत पत्र-पुज से भरी,
प्रकृति खडी
हुई, ठगी
हुई, अचित !

उठी पुकार एक शाति भग कर,
उठा गगन सिहर, उठी अवनि सिहर,
'बिसार दो विषाद की गई घडी,'
प्रकृति खडी
हुई, जगी
हुई, भ्रमित

शिशिर समीर बन गया मलय पवन,
नवीन गीत-प्राण से गुँजा गगन,
नवीन रक्त-राग से रँजी अवनि,
प्रकृति खडी
सुरस पगी,
सुअकुरित

६

प्रहार शीत वात का हुआ निठुर,
विकास पत्र-पुष्प का रुका ठिठुर,
प्रकृति विकारवान, पीलिमामयी,
डरी हुई
जमीन
थरथरा उठी !

सवेग स्वर्ग लोक से हवा चली,
हिली-डुली वनस्थली शिशिर-छली,
प्रकृति सजीवनी अमर विभामयी,
हरी हुई
जमीन
हरहरा उठी !

नयन भरे हुए नवल सिगार से,
श्रवण भरे हुए प्रणय पुकार से,
हृदय भरे हुए मधुर विचार से,
भरी हुई
ज़मीन
मुसकरा उठी !

७

अपत्र डाल-डाल है खडी हुई,
बसन-विहीन, लाज मे गडी हुई,
लुटा हुआ सिगार सौ बसत का,
छली हुई
विभूति से
वनस्थली ।

अगण्य स्वप्न झड गए पलक-पले,
अगण्य भाव घाव चिह्न दे चले,
उसाँस इस तरह चला दिगत का—
कि जड समेत
कल्पना
लता जली ।

अजान शक्ति जीवनी सदा रही—
जली हुई लता सहास लहलही,
सजीव फिर हुई मरी हुई मही,
भरी हुई
पराग-पुष्प
अंजली ।

८

दिनानुदिन जली धरा, जला गगन,
दिनानुदिन जला सलिल, जला पवन,
कहाँ तपन जिसे न छाँह घेरती,
कहाँ घड़ी
निदाघ की
अटल हुई!

तमाम ओर से घिरी घटा सघन,
अधीर हो उठी तपी-तची अवनि,
नियति न क्यों सवेग भाग्य फेरती,
कहाँ न प्यार
की घड़ी
विकल हुई!

तमाम रात भूमि पर पड़ी फुही,
सहस्र बिंदु माल से जड़ी जुही,
सुरभि सनी, सरस बनी खड़ी मही,
वियोग की
जलन कहाँ
विफल हुई!

६

बसत-दूत कुज-कुज कूकता,
बसत-राग कुज-कुज फूँकता,
पराग से सजी सुहाग मजरी,
बसत गोद
मे लसी
प्रकृति परी !

प्रणय संदेश कुँज-कुँज गूँजता,
प्रणय स्वरूप को सदैव पूजता,
कहाँ स्वरूपिनी न स्नेह पर ढरी,
बसत गोद
मे झुकी
प्रकृति परी !

बसत-दूत मुग्ध मूक हो गया,
बसत-वात गध-मद सो गया,
हुई सफल-विनम्र आम्र मजरी,
बसत गोद
मे गड़ी
प्रकृति परी !

१०

विदग्ध भूमि व्योम को निहारती,
पिपासु कंठ मेघ को पुकारती,
भरा पयोद शुष्क भूमि हेरता;
कहाँ छिपी
मिलन घड़ी,
लगे झड़ी

बयार घन शुभागमन बता रही,
तड़ित गगन-अधीरता जता रही,
विनम्र अभ्र भू समग्र घेरता,
निकट हुई,
मिलन घड़ी,
लगे झड़ी !

भरा पयोद भूमि पर गया बिखर,
नहा निखिल दिगंबरा उठी निखर,
मिले सिंगार और स्नेह देह धर,
अमर हुई
मिलन घड़ी,
लगी झड़ी !

११

अनेक रंग से रँगा हुआ गगन,
अनेक रंग से रँगी हुई अवनि,
अनेक भाव से पगी हुई हवा,
सजी - बजी
गुलाब - गर्व
पंखुरी !

अनेक दीप से दमक रहा गगन,
अनेक दीप से दुपक रही अवनि,
अनेक भाव से जगी हुई हवा;
डरी खडी
गुलाब - गर्व
पंखुरी !

बुझे हुए प्रदीप आसमान के,
बुझे हुए प्रदीप सब जहान के,
कसूरवार-सी ठगी हुई हवा;
झड़ी पड़ी
गुलाब - गर्व
पंखुरी !

१२

समेट ली किरण कठिन दिनेश ने,
समा बदल दिया तिमिर-प्रवेश ने,
सिंगार कर लिया गगन प्रदेश ने,
नटी निशीथ
का पुलक
उठा हिया !

समीर कह चला कि प्यार का प्रहर,
मिली भुजा-भुजा, मिले अधर-अधर,
प्रणय प्रसून सेज पर गया बिखर,
निशा सभीत
ने कहा कि
क्या किया !

अशक शुक्र पूर्व मे उवा हुआ,
क्षितिज अरुण प्रकाश से छुआ हुआ,
समीर है कि सृष्टिकार की दुआ,
निशा विनीत
ने कहा कि
शुक्रिया !

१३

दिवस नयन मुँदे, जगी विभावरी,
जगी ललाम लक्ष दीप की लडी,
युगल प्रदीप कौन से नही जले
कि आसमान
के सिंगार
में कसर !

ललाम लक्ष दीप मंद पड़ गए,
सिगार सौ-हजार के उजड़ गए,
सनेह नेत्र दीप दीर्घ झलमले,
सुभाग चद्र
से उठा
गगन सँवर !

निशा चुकी, गगन पटल बदल रहा,
विनीत पीत चद्र मंद ढल रहा,
तुषार में नखत-निकाय गल रहा;
जड़ा सुहाग
विदु पूर्व
भाल पर !

१४

सिदूर-सी किरण सुवर्ण थाल मे
सुहाग लिख चली निशीथ भाल में,
हुई प्रसन्न भूमि साँझ-श्यामला;
क्षितिज लकीर
मंद मुसकरा
उठी !

कलानिधान रश्मियान पर चढ़े
प्रदीपवान आसमान पर बढ़े,
हुई समुद्र की तरंग चंचला;
धरा समग्र
दूध से
नहा उठी !

उषा-अरुण-वसन सजी बसुंधरा—
सदल, सफल, सुफुल्ल फूल उर्वरा—
चला समीर वृक्ष, वेलि, तृण हिला;
विहंग-पाँत
साथ चहचहा
उठी !

१५

समीर स्नेह-रागिनी सुना गया,
तड़ाग मे उफान-सा उठा गया,
तरंग मे तरंग लीन हो गई;
झुकी निशा,
झँपी दिशा,
झुके नयन !

बयार सो गई अडोल डाल पर,
शिथिल हुआ सलिल सुनील ताल पर,
प्रकृति सुरम्य स्वप्न बीच खो गई;
गई कसक,
गिरी पलक,
मुँदे नयन !

विहंग प्रात गीत गा उठा अभय,
उड़ा अलक चला ललक पवन मलय,
सुहाग नेत्र, चूमने चला प्रणय;
खुला गगन,
खिले सुमन,
खुले नयन !

१६

सिंगारहार की सुगंधि आ रही,
सुवास में सुहासिनी नहा रही,
सुखी प्रकृति विलोक सिद्ध साधना;
विहँस-विहँस
खिले कुसुम,
खिले कुसुम !

असंख्य दीप स्वर्ग सौध मे जले,
असंख्य बार प्यार से अधर मिले,
हुई असंख्य रूप एक भावना;
पुलक-पुलक
हिले कुसुम,
हिले कुसुम !

प्रकाशमान आसमान हो चला,
हुई शिथिल निशीथ-स्वप्न-शृंखला,
तुषार बिंदु पत्र-पुष्प से ढला;
सिहर-सिहर
झड़े कुसुम,
झड़े कुसुम !

१७

हुई गुलाल मेघमाल अस्त जब,
विहंग वृक्ष मे छिपे समस्त जब,
हुआ अशब्द और स्तब्ध जब गगन,
मुखर चरण
ध्वनित हुए
झनन-झनन !

गगन खडा हुआ विशाल ताल में,
गगन सुबद्ध भूमि अकमाल मे,
चटुल युगल तरंग मे मगन-मगन,
सुवर्ण
किकिणी बजी
छनन-छनन !

अभी तलक अटूट नीद रात की,
खुली अभी नही पलक प्रभात की,
प्रसुप्त गुप्त नीड में मलय पवन,
खनक उठे
कनक वलय
खनन-खनन !

१८

किरण छिपी तडाग-अतराल मे,
सिमट गई सरोजिनी मृणाल में,
अगीत हो गया सभीत भृग दल;
प्रणय सजग
हुआ, हृदय
हुए विकल !

कुसुम-कली सुगंध सेज पर सजी,
मधुर-मधुर सुवर्ण पैंजनी बजी,
पुलक प्रफुल्ल आज कामना सकल,
णय सफल
हुआ, हृदय
मिले पिघल !

किरण खिली, विहँस पडी मृणालिनी,
ध्वनित हुई विमुक्त भृंग रागिनी,
हिली सकुच विलास-बाहु-वासिनी;
सटे अधर
हटे, हुए
नयन सजल !

१६

अधीर है समीर अंतरिक्ष मे,
भरा पुलक लता, वितान, वृक्ष मे,
उठी हरेक अग बीच गुदगुदी,
उमग की
तरग-सी
उमड़ चली !

कसी हुई तड़ित पयोद-पाश मे,
हुआ सँयोग वासना-विलास मे,
प्रमत्त, स्वप्न-मग्न आँख अधमुँदी,
प्रणय-घटा
हृदय-गगन
घुमड़ चली !

बरस पडे विवश जलद जमीन पर,
गमक उठी सुगंधि भूमि से उभर,
सरस रसा-दिशा, सजल नयन-अधर,
द्रवित निशा
प्रभात की
शरण चली !

२०

सहस्र नेत्र खोलकर खडा गगन,
सलज्ज-संकुचित पडी हुई अवनि,
किसी प्रबल प्रणय पिपासु की लगन
कि शर्वरी
बिसार कर
खड़ी .

सुछवि निमेष छोड नेत्र पी रहे,
अमर हुए, कि मर चुके, कि जी रहे,–
कहाँ जबान प्रेम की कथा कहे,
करे बयान्
स्नेह की सुघर
घडी !

प्रमत्त भावना न बात से बँधी,
प्रभात की किरण न रात से बँधी,
प्रणय निशा न अश्रु-पात से बँधी,
सहस्र नेत्र
से लगी हुई
झड़ी

२१

नखत समूह आसमान पर चढा,
सघन तिमिर जमीन की तरफ बढा,
विहंग पंक्ति वृक्ष-नीड को चली,
अबाध
वाहुपाश को
विलासिनी !

नखत समूह की पलक झुकी हुई,
हवा किसी विचार मे रुकी हुई,
निशीथ, मूर्ति अंधकार की ढली,
अचेत
वाहुपाश बीच
कामिनी !

उषा किरण-कतार को सँभालती,
हवा सुगध-भार को सँभालती,
धरा नवल प्रसून-दल, कलित कली,
चली
सँभाल अंग
हंस गामिनी !

२२

तरणि छिपा कि आँधियाँ झपट पड़ी,
प्रकंपमान भूमि से लिपट पड़ी,
सहस्र बार वज्र अस्त्र कड़कडा
घिरे घुमड़
सघन भयद
पयोद भी !

हुई प्रलय प्रहार से निशा दुखी,
उपाधि-व्याधि से दिशा-दिशा दुखी,
परंतु अंबरांत मुसकरा पड़ा,
कहीं मिटा
प्रभात का
प्रमोद भी !

प्रकृति पुनः किरण-सुहाग माँगती,
सुरभि-पराग-अंगराग माँगती,
प्रसून-सा प्रसन्न भाग माँगती,
कलोल से
गुँजायमान
गोद भी !

२३

नवीन राग मे रमे नवीन घन,
निरत निनाद-नृत्य मे तड़ित चरण,
अजस्र मर्मरित लतर-द्रुमावली,
प्रमुख पुकार
प्यास की
समीर मे !

गरज गए जलद हुआ न मन विकल,
चमक गईं तड़ित सका हृदय न गल,
द्रवित न कर सकी सिहर द्रुमावली,
लगा न तीर
पीर का
शरीर में !

विलीन हो गए कभी जलद सघन,
अदृश्य हो गए कभी तडित चरण,
अतृप्ति ही किए रहा प्रणय वरण,
पुकार ही
बची रही
अखीर मे !

२४

पुकारता पपीहरा पि ' ' 'आ, पि ' 'आ,
प्रतिध्वनित निनाद से हिया-हिया;
हरेक प्यार की पुकार मे असर,
कहाँ उठी,
कहाँ सुनी गई,
मगर !

घटा अखंड आसमान मे घिरी,
लगी हुई अखंड भूमि पर झरी,
नहा रहा पपीहरा सिहर-सिहर;
अधर-सुधा
निमग्न हो रहे
अधर !

सुनील मेघहीन हो गया गगन,
बसुंधरा पड़ी पहन हरित बसन,
पपीहरा लगा रहा वही रटन;
प्रणय तृषा
अतृप्त सर्वदा,
अमर !

२५

विहंग माल डाल पर उतर पडी,
निशा धरा विशाल पर उतर पडी,
प्रकाशमान स्नेह का निलय हुआ,
प्रदीप लौ
जहाँ-तहाँ
हुई खडी !

प्रगाढ़ अंधकार मे धँसी धरा,
प्रलब वाहुपाश मे फँसी धरा,
प्रमत्त नीद में प्रदीप लय हुआ,
प्रफुल्ल स्वप्न
से ललक
पलक जुडी !

विहग भीड़ नीड से निकल पड़ी,
उषा क्षितिज लकीर से निकल पड़ी,
सुगंधि नव समीर से निकल पड़ी;
तुषार विदु
भूमि सेज
पर झडी !

२६

बिखर हुई विलुप्त अभ्र अर्गला,
सुधा समुद्र चाँद से उमड़ चला,
निचोल खोल रूप राशि है पडी;
चकित गगन,
चकित नयन,
चकित गगन !

अभय हिलोर मे विभोर है निशा,
अतुल हुलास-हर्षमय दिशा-दिशा,
अलस प्रमाद में जड़ित हुई घडी;
थकित गगन,
थकित नयन,
थकित गगन !

प्रभात में निमज्जिता हुई निशा,
प्रकाश मे निरीह-सी दिशा-दिशा,
चली सवेग टूट स्वप्न की लडी;
स्रवित गगन,
स्रवित नयन,
स्रवित गगन !

२७

पहन चुका गगन नखत-खचित वसन,
पहन चुकी अवनि तमस-असित वसन,
असंख्य स्वप्न से लदे हृदय-नयन,
स्वभाव से
भरी हुई
विभावरी !

हरेक ठौर देव मूर्ति है खड़ी,
हरेक ठौर प्रभ परी उतर पड़ी,
सदेह स्वप्न से ठगे हृदय-नयन,
प्रभाव से
भरी हुई
विभावरी !

उतारता गगन नखत-जटित वसन,
उतारती अवनि तमस-रचित वसन,
गगन चकित-नयन, धरा चकित-नयन,
अभाव से
भरी हुई
विभावरी !

२८

बसंत का पवन कि श्वास प्यार का,
बसंत नाम दूसरा सिंगार का,
गिरा स्वरूप धार कंठ खोलती,
कि बोलती
बसंत की
नवेलियाँ

बसंत में अचेत ही प्रणय रहा,
बसंत में उजाड़ ही हृदय रहा,
गिरा न मुक्त कंठ गीत गा सकी,
चहक चुकी
बसंत की
सहेलियाँ

बसंत से निराश किसलिए गगन?
बसंत से निराश किसलिए अवनि ?
निराश किसलिए शरीर-प्राण-मन ?
बुझा न सत्य
स्वप्न को
पहेलियाँ !

२६

पलाश पर दुलार, लो, उतर पडा,
पलाश पर सिंगार, लो, उतर पडा,
पलाश पर अँगार, लो, उतर पडा,
स्वरूप-स्नेह
के समीप
आग है।

मगर न रूप से कभी हृदय डरा,
मगर न स्नेह से कभी हृदय भरा,
उतर सका सुवर्ण की तरह खरा;
स्वरूप-स्नेह
का जला
अदाग है।

पलाश से दुलार, लो, गया उतर,
पलाश का सिंगार, लो, गया बिखर,
परंतु एक भाव हो गया अमर,
स्वरूप-स्नेह
का अनंत
राग है!

३०

कि वह कभी न स्वर्ग मे समा सका,
कि वह न पॉव नर्क मे जमा सका,
कि वह न भूमि से हृदय रमा सका,
यही मनुष्य
का अमर
चरित्र है

मनुष्य विश्व प्रेम मे पगा हुआ,
मनुष्य आत्म-युद्ध मे लगा हुआ,
हरेक प्रण-प्रयास मे ठगा हुआ,
मनुष्य हर
स्वरूप मे
पवित्र है

अपूर्ण को न पूर्ण कर सका कभी,
अभाव के न घाव भर सका कभी,
हजार हार से न डर सका कभी,
मनुष्य की
मनुष्यता
विचित्र है

३१

सुना कि एक स्वर्ग शोधता रहा,
सुना कि एक स्वप्न खोजता रहा,
सुना कि एक लोक भोगता रहा,
मुझे हरेक
शक्ति का
प्रमाण है !

सुना कि सत्य से न भक्ति हो सकी,
सुना कि स्वप्न से न मुक्ति हो सकी,
सुना कि भोग से न तृप्ति हो सकी,
विफल मनुष्य
सब तरफ
समान है !

विराग मग्न हो कि राग रत रहे,
विलीन कल्पना कि सत्य मे दहे,
धुरीण पुण्य का कि पाप मे बहे,
मुझे मनुष्य
सब जगह
महान है !

३२

कही अनादि का पता लगा रहा,
कही अनत का अलख जगा रहा,
कही थहा रहा अगम्य सिधु को,
कही समृद्ध
सिद्ध औ'
तपोधनी

कही उठा रहा पहाड शीश पर,
कही प्रबल प्रवाह रोकता निडर,
कही बुला रहा समीप इदु को,
कही प्रसिद्ध
जन समाज
अग्रणी

कही किरण-वितान के तले खडा,
कही तुषार-विदु की तरह जडा,
कही निकुज मे पराग-सा झडा,
कही असिद्ध
रूप-राग
का ऋणी !

३३

उसे न विश्व की विभूतियाँ दिखी,
उसे मनुष्य की न खूबियाँ दिखी,
मिली हृदय-रहस्य की न झाँकियाँ,
सका न खेल
जो कि प्राण
का जुआ !

सजीव है गगन किरण-पुलक भरा,
सजीव गध से बसी बसुधरा,
पवन अभय लिए प्रणय कहानियाँ,
डरा-मरा
न स्नेह ने
जिसे छुआ !

गगन घृणित अगर न गीत गूँजता,
अवनि घृणित अगर न फूल फूलता,
हृदय घृणित अगर न स्वप्न झूलता,
जहाँ बहा
न रस वही
नरक हुआ !

समाप्त

हमारे सांस्कृतिक प्रकाशन

[हिन्दी ग्रन्थ]

१ मुक्तिदूत-[पौराणिक रोमास]—श्री० वीरेन्द्र कुमार जैन एम० ए० ५)
२ शेरो-शायरी [१५०० शेर और १६० नज़्में]—श्री० अयोध्याप्रसाद गोयलीय ८)
३ पथचिह्न [स्मृतिरेखायें और निबंध]—श्री० शान्तिप्रिय द्विवेदी २)
४ दो हजार वर्ष पुरानी जैन कहानियाँ—श्री० डॉ० जगदीशचन्द्र एम० ए० ३)
५ वैदिक साहित्य—श्री० रामगोविन्द त्रिवेदी ६)
६ पाश्चात्य तर्कशास्त्र—श्रीजगदीश भिक्षु एम० ए० ६)
७ आधुनिक जैन कवि—श्रीमती रमा, जैन ३॥)
८ जैन शासन—श्री० सुमरचन्द्र दिवाकर ३)
९ हिन्दी जैन साहित्य का इतिहास—श्री० कामता प्रसाद जैन २॥=)
१० कुन्द कुन्दाचार्य्य के तीन रत्न—श्री० गोपाल दास पटेल २)

[संस्कृत-प्राकृत ग्रन्थ]

११ महाबन्ध—(महाधवल सिद्धान्त शास्त्र) १२)
१२ न्याय विनिश्चय विवरण—(प्रथम भाग) १५)
१३ तत्वार्थ वृत्ति—(हिन्दी सार सहित) १६)
१४ कन्नड़ प्रान्तीय ताडपत्रीय ग्रन्थ सूची १३)
१५. मदन पराजय—(हिन्दी सार सहित) ८)
१६. करलक्खण—(सामुद्रिक शास्त्र) १)
१७. केवलज्ञान—प्रश्न चूडामणि (ज्योतिष ग्रन्थ) ४)
१८. नाममाला— ३॥)
१९. सभाष्य रत्न मंजूषा—(छन्द शास्त्र) २)

भारतीय ज्ञानपीठ काशी, दुर्गाकुंड रोड बनारस ४

ज्ञानपीठके आगामी प्रकाशन

[जो सन् '५० में प्रकाशित हो रहे हैं]

१. **हमारे आराध्य**—ये रेखाचित्र श्री बनारसीदास चतुर्वेदीकी सर्वोत्तम कृति है। इसमे उन्होने अपनी आत्मा उँडेल दी है।

२. **शेर-ओ-सुखन (प्रथम भाग)** उर्दू शायरीका प्रारभसे ई० स० १९०० तक का प्रामाणिक इतिहास। तुलनात्मक विवेचन, निष्पक्ष आलोचना और इस अवधिमे हुए प्राय सभी मशहूर शायरोके श्रेष्ठतम कलामका सकलन तथा उनका परिचय।

३. **सिद्धशिला (काव्य)** सिद्धार्थके ख्यातिप्राप्त कवि श्री अनूप शर्माकी हिन्दी ससारको अमर देन। भगवान् महावीरका हृदयस्पर्शी जीवन।

४. **रेखाचित्र और संस्मरण**—हिन्दीके तपस्वी सेवक श्री बनारसीदास चतुर्वेदीकी जीवनव्यापी साधना। उनकी अन्तरात्माकी प्रतिध्वनि।

५. **बापू**—हिन्दीके उदीयमान तरुण कवि श्री 'तन्मय' बुखारिया की महात्मा गाधीके प्रति मूक श्रद्धाञ्जलि।

६. **भारतीय ज्योतिष**—ज्योतिषके अधिकारी विद्वान् श्री नमिचद्र जी जैन ज्योतिषाचार्यकी प्रामाणिक कृति।

७. **ज्ञानगंगा**—ससारके महान् पुरुषोकी श्रेष्ठतम सूक्तियां।

नोट—जो १०) भेजकर स्थायी सदस्य बन जाएगे उन्हे पौने मूल्य मे प्राप्त होगे।